ट्रस्ट व प्रबंधकारिणीके सदस्य

श्री आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला

श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला पुष्प नं० २५

श्रीमत्परमपूज्य विद्वच्छिरोमणि प्रातःस्मरणीय दिगंबर
जैनाचार्यश्रीकुन्थुसागरजीमहाराजविरचित

नरेशधर्मदर्पण

— प्रकाशक —

श्रीमान् ग्वांदू नरेश (बांसवाडा)

—*—

तृतीयावृत्ति } १०००

वीर संवत् २४७०
सन् १९४४

मूल्य { कर्तव्यपालन

श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रन्थमाला.

उद्देश—परमपूज्य आचार्यश्रीके द्वारा रचित ग्रंथोंका प्रकाशन व प्रचार करना व अनुकूलताके अनुसार इतर प्राचीन जैनग्रंथोंका उद्धार तथा प्रकाशन करना है।

सामान्य नियम.

१ इस ग्रंथमालाको जो सज्जन अधिकसे अधिक सहायता देना चाहेंगे वह सहर्ष स्वीकृत की जायगी।

२ जो सज्जन १०१) या अधिक देकर इस ग्रंथमालाका स्थायी सभासद बनेंगे उनको ग्रंथमालासे प्रकाशित सर्वग्रंथ पोस्टेज खर्च लेकर विनामूल्य दिये जायेंगे।

३ जो सज्जन ५१) या अधिक देकर हितचिंतक बनेंगे उनको पोस्टेज व अर्धमूल्य लेकर प्रकाशित ग्रंथ दिये जायेंगे।

४ जो सज्जन २५ या अधिक देकर सहायक बनेंगे उनको पोस्टेज व लागतमूल्य लेकर प्रकाशित ग्रंथ दिये जायेंगे।

५ अन्य सज्जनोंको निश्चितमूल्यसे दिये जायेंगे।

६ ग्रंथोंके मूल्यसे आई हुई रकमका उपयोग ग्रंथमालाके द्वारा प्रकाशित होनेवाले ग्रंथोंके उद्धार में ही होगा।

७ ग्रंथमालाके ट्रस्टडीड होकर मुंबईमें वह रजिस्टर्ड होचुका है।

सहायता भेजनेका पता—सेठ गोविंदजी रावजी दोशी
ठि. रावजी सखाराम दोशी, कापड़ पेठ, सोलापुर

ग्रंथमालासंबंधी सर्व प्रकारका पत्रव्यवहार नीचे लिखे पतेपर करें
वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
मंत्री—आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला, सोलापुर.
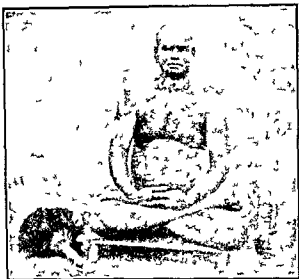
श्रीपरमपूज्य, पूज्यपाद, प्रातःस्मरणीय, जगद्वंद्य, जगदुद्धारक,
नरेंद्रपूज्य, व्याख्यानवाचस्पति, कविवर्य,
वादीभकेसरी, विद्वच्छिरोमणि,

आचार्यवर्य १०८ श्रीकुन्थुसागरजी महाराज

•••ग्रंथकर्ताका परिचय•••

महर्षि प्रातःस्मरणीय आचार्य श्रीकुंथुसागरजी महाराजने इस ग्रंथकी रचना की है। आप एक परम वीतरागी, विद्वान् मुनिराज हैं। आपकी जन्मभूमि कर्णाटक प्रान्त है जिसे पूर्वमें जिन ही महर्षियोंने जन्म लेकर जैनधर्मको मुख उज्ज्वल किया था। इसलिए "कर्णाटक भारतीति" सार्थक नामको पाकर सबके कानोंमें गूंज रहा है।

कर्णाटक प्रांतके ऐश्वर्यभूत बेळगांव जिल्हेमें ऐनापुर नामक सुंदर नगर है। वहांपर चतुर्थकुलमें अलंकारभूत अत्यंत शांत स्वभाववाले सातप्पा नामक श्रावकोत्तम रहते हैं। आपकी धर्मपत्नी साक्षात् सरस्वतीके समान सद्गुणसंपन्न थी। इसलिए सरस्वतीके नामसे ही प्रसिद्ध थी। सातप्पा व सरस्वती दोनों अत्यंत प्रेम व उत्साहसे देवपूजा व गुरूपास्ति आदि सत्कार्यमें सदा मग्न रहते थे। धर्मकार्योंको व प्राणके समान समझते थे। उनके हृदयमें आंतरिक धार्मिक श्रद्धा थी। श्रीमती सौ. सरस्वतीने संवत् १९५० में एक पुत्ररत्नको जन्म दिया। इस पुत्रका जन्म कार्तिक शुक्लपक्षकी द्वितीयाको हुआ। मातापिताओंने पुत्रका जीवन सुसंस्कृत हो इस सुविचारसे जन्मसे ही आगमोक्त संस्कार प्रारंभ किया। जातकर्म संस्कार होनेके बाद शुभमुहूर्तमें नामकरण संस्कार किया जिसमें इस पुत्रका नाम रामचंद्र रखा गया। बादमें चौलकर्म, अक्षराभ्यास, पुस्तकग्रहण आदि आदि

सत्कारोंसे सदृढ़ कर सद्विद्याका अध्ययन कराया। रामचद्रके हृदयमें बालकालसे ही विनय, शील व सदाचार आदि भाव जागृत हुए थे। जिसे देखकर लोग आश्चर्ययुक्त व सतुष्ट होते थे। रामचद्रको बाल्यावस्थामें ही साधु सयमियोंके दर्शनमें उत्कट इच्छा रहती थी। कोई साधु ऐनापुरमें जाते तो यह बालक दौड कर उनकी वदनाके लिए पहुचाता था। बाल्यकालसे ही इसके हृदयमें धर्मके प्रति अभिरुचि थी। सदा अपने सहधर्मियोंके साथ तत्वचर्चा करनेमें ही समय बिताता था। इस प्रकार सोलह वर्ष व्यतीत हुए। अब माता पितापिताओंने रामचद्रको विवाह करने का विचार प्रगट किया। नैसर्गिक गुणसे प्रेरित होकर रामचद्रने विवाहके लिए निषेध किया एव प्रार्थना की कि पिताजी! इस लौकिक विवाहसे मुझे सतोष नहीं होगा। मैं अलौकिक विवाह अर्थात् मुक्तिलक्ष्मीके साथ विवाह कर लेना चाहता हू। मातापिताबाने पुनः आग्रह किया। मातापिताओंकी आज्ञोल्लघनभयसे इच्छा न होते हुए भी रामचद्रने विवाहको स्वीकृति दी। मातापिताओंने विवाह किया। रामचद्रको अनुभव होता था कि मैं विवाह कर बडे बधनमें पड गया हू।

विशेष विषय यह है कि बाल्यकालसे सत्कारोंसे सुदृढ होने के कारण यौवनावस्थामें भी रामचद्रको कोई व्यसन नहीं था। व्यसन था तो केवल धर्मचर्चा, सत्सगति व शास्त्रस्वाध्यायका था। बाकी व्यसन तो उससे घबराकर दूर भागते थे। इस प्रकार पच्चीस वर्ष पर्यंत रामचद्रने किसी तरह घरमें वास किया। परतु

बीचबीचमें यह भावना जागृत होती थी कि भगवन् ! मैं इस गृहबंधनसे कब छूटूं ? जिनदीक्षा लेनेका भाग्य कब मिलेगा ? वह दिन कब मिलेगा जब कि सर्वसंगपरित्यागकर मैं स्वपरका ल्याण कर सकूं ?

दैववशात् इस बीचमें मातापिताओंका स्वर्गवास हुआ । विकराल कालकी कृपासे भाई और बहिमन भी बिछुड़ गये । तब रामचंद्रजीका चित्त और भी उदास हुआ । उनका बंधन छूट गया । तब संसारकी अस्थिरताका उन्होंने स्वानुभवसे पक्का निश्चय करके और भी धर्ममार्गपर स्थिर हुए ।

रामचंद्रके श्वसुर भी धनिक थे । उनके पास बहुत संपत्ति था । परंतु उनको कोई संतान नहीं था । वे रामचंद्रसे कई दफे कहते थे कि यह संपत्ति (घर वगैरह) तुम ही ले लो, मेरे यहांका सब कारोबार तुम ही चलाओ । परन्तु रामचंद्र अपने श्वसुरको दुःख न हो इस विचारसे कुछ दिन रहा भी । परंतु मनमनमें यह विचार किया करता था कि " मैं अपनी भी घरदार छोडना चाहता हूं । इनकी संपत्तिको लेकर मैं क्या करूं " । रामचंद्रकी इस प्रकारकी वृत्तिसे श्वसुरको दुःख होता था । परंतु रामचंद्र लाचार था । जब उसने सर्वथा गृहत्याग करनेका निश्चय ही कर लिया तो उनके श्वसुरको बहुत अधिक दुःख हुआ ।

आपने श्रीपरमपूज्य आचार्य श्री शांतिसागर महाराजके पादमूलमें पाकर अपने संकल्पको पूर्ण किया । सन् २५ में श्रवणबेलगोलाके मस्तकाभिषेकके समय पर आपने क्षुल्लक दीक्षा ली व

सोनागिर क्षेत्रपर मुनिदीक्षा ली। और मुनि कुंथुसागरके नामसे प्रसिद्ध हुए। जब आप घर छोड़ करके साधु हुए तब आपकी धर्मपत्नी धर्मध्यान करती हुई घरमें ही रही।

आपने अपनी क्षुल्लक व एलक अवस्थामें बहुतसा धर्मप्रभावना के कार्य किये हैं। संस्कारोंके प्रचारके लिये सतत उद्योग किया है। आपने मुनि अवस्थामें उत्तरप्रांतके अनेक स्थानोंमें विहार कर धर्मकी जागृति की है। गुजरात प्रांत जो कि चारित्र व संयमकी दृष्टिसे बहुत ही पीछे पड़ा था, उस प्रांतमें छोटेसे छोटे गांवमें भी विहार कर लोगोंको धर्ममें स्थिर किया है।

आपमें स्वपरकल्याणकारी निर्मल ज्ञान होनेके कारण आप सर्वजनपूज्य हुए हैं। आपकी जिस प्रकार प्रवचनकलामें विशेष गति है, उसी प्रकार वक्तृत्वकलामें भी आपकी ख्याति है। श्रोताओंके हृदयको आकर्षण करनेका प्रकार, वस्तुस्थितिको निरूपण कर भव्योंको संसारसे तिरस्कार विचार उत्पन्न करनेका प्रकार आपको अच्छी तरह अवगत है। आपके गुण, संयम आदियोंको देखनेपर यह कहे हुए बिना नहीं रह सकते कि आचार्य शांतिसागरजी महाराजने आपका नाम कुंथुसागर बहुत सोच समझकर रक्खा है।

आपने अपनी माता सरस्वतीका नाम सार्थक बनाया है। क्योंकि आप अपने नाम तथा काममें सरस्वतीपुत्र ही सिद्ध हुए हैं। चतुर्विंशतिजिनस्तुति, शांतिसागर चरित्र, बोधामृतसार, निजात्मशुद्धिभावना, मोक्षमार्गप्रदीप, ज्ञानामृतसार, स्वरूपदर्शनसूर्य, नरेशधर्मदर्पण मनुष्यकृत्यसार आदि नीतिपूर्ण तत्वगर्भित

खांडु राज्यमें आचार्यश्रीका सार्वजनिक भाषण जिसमें खांडु नरेश भी उपस्थित हैं।

खांदु राजमहलमें आचार्य श्री कुंथुसागरजीका भाषण

प्रथानोंकी उत्पत्ति आपके ही अगाधज्ञानरूपी खानसे हुई है, हो रही है और होती रहेगी।

आपके दुर्लभ संस्कृतभाषा-पाण्डित्यपर बडे २ विद्वान् पंडित भी मुग्ध हो जाते हैं। आपका ग्रंथनिर्माणशैली अपूर्व है। वर्णन-कौशल्य निराला है। आगम विषयोंको आधुनिक ढगसे स्पष्टीकरण करनेमें आप सिद्धहस्त हैं। आपकी भाषण-प्रतिभा शान्त व गंभीर मुद्राके सामने बड २ राजाओंके मस्तक झुकते हैं। गुजरात प्रांतके प्रायः सभी संस्थानाधिपति आपके आज्ञाधारी शिष्य बने हुए हैं। अबतक हजारोंकी संख्यामें जैनेतर आपके सदुपदेशसे प्रभावित होकर मकारत्रय (मद्य,मांस,मदिरा) के नियमी व धर्मी बन चुके हैं। गुजरात प्रांतमें आपके द्वारा जो धर्मप्रभावना हुई है व हो रही है वह इतिहासके पृष्ठोंपर सुवर्णाक्षरोंमें चिरकालतक अंकित रहेगी। गुजरातमें कई संस्थानिकोंने अपने राज्यमें इन तपोधनके जन्मदिनके स्मरणार्थ सार्वजनिक छुट्टी व सार्वत्रिक अहिंसादिन मनानेके फर्मान निकाले हैं। सुदासना स्टेटके प्रजावत्सल नरेश तो इतने भक्त बन गये हैं कि महाराजका जहां २ विहार होता है वहां प्रायः उनकी उपस्थिति रहती है। कभी अनिवार्य राज्यकार्यसे परवश होकर महाराजसे विदा लेनेका प्रसंग आनेपर माताको बिछुडते हुए पुत्रके समान नरेशकी आंखोंसे आंसु बहते हैं। धन्य है ऐसी गुरुभक्ति! युवराज कुमार साहेब रणजीतसिंहजी पूज्यवर्यके परमभक्त हैं। वे कई समय महाराजकी सेवामें उपस्थित होकर आत्महितके तत्वोंका पूछते हुए महाराजकी सेवामें ही दीर्घ समय व्यतीत करते

है। तारगाजीस महाराजका विहार होनेका समाचार जानकर कुमार साहेबसे रहा नहीं गया, वे पूज्यश्रीके चरणोंमें उपस्थित होकर (अश्रुपात करते हुए) महाराजसे निवेदन करते हैं कि स्वामिन्! पुन कब दर्शन मिलेगा? कितनी अद्भुतभक्ति है यह! पूज्यश्रीने आज गुजरातमें जो धर्मजागृति की है वह "न भूतो न भविष्यति" है। गुजरातमें जैन क्या, जैनेतर क्या, हिंदु क्या, मुसलमान क्या, उनके चरणोंके भक्त हैं। आज पूज्यश्रीका स्थान बहुत ऊंचा है। अलुवा, माणिकपुर, पेथापुर, डूंगरपुर, बांसवाडा आदि अनेक राज्योंके अधिपति आपके सद्गुणोंसे मुग्ध हैं। पिछले दिन बडोदा राज्यमें आपका अपूर्व स्वागत हुआ। राज्यके न्यायमंदिरमें स्टेटके प्रधान सर कृष्णमाचारीकी उपस्थितिमें आचार्यश्रीका सार्वजनिक तत्वोपदेश हुआ।

आप भगवान् समंतभद्र जिनसेनादिका स्मरण दिलाते हैं। ऐसे महाविभूतियोंसे ही धर्मका मुख उज्वल होता है। ऐसे प्रातःस्मरणीय पूज्य महर्षिके चरणोंमें त्रिकाल अनन्त नमोस्तु है।

प्रकृत ग्रंथ भी श्रीपरमपूज्य आचार्यश्री की निर्मल वर्धमान चारित्रके फलसे संपन्न विद्वत्ताके द्वारा निर्मित है। अभी कुछ दिन पहिले खांदु राज्यमें महाराजका पदार्पण हुआ, वहां अपूर्व धर्मप्रभावना हुई। उसकी स्मृतिमें श्री खांदु नरेशने इसे प्रकाशित कराया है, उनके इस साहित्यप्रेम व गुरुभक्तिके लिए हम कृतज्ञ हैं।

विनीत—गुरुचरण सेवक,
वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
मंत्री—श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला

नरेशधर्मदर्पण—

श्रीगुरुभक्त, प्रजावत्सल, न्यायनीतिनिपुण
स्वनामधन्य खाटूनरेश शकरसिंहजी साहब बहादुर

(इस पुस्तक प्रकाशक)

उनका माग्य इससे भी कहीं ऊचे पदकी प्राप्तिके लिए आगे २ दौड़ता जा रहा था । उस समय महारावळजी श्रीविजयसिंहजीके महाराज कुंवर श्रीउम्मेदसिंहजी अपने पिताके बाद राज्याधिरूढ़ हुए और उनके महाराज कुंवर श्रीभवानीसिंहजी बड़ापुरके नरेश हुए लेकिन उनके कोई संतान न थी। इसलिए खांदुके छोटे कुमार बहादुरसिंहजी जो तेजपुर गोद गये थे, बड़ापुरकी गादीपर गोद ले लिये गये और महारावलजी हुए। इधर महाराज सरदारसिंहजीके बाद महाराज मानसिंहजी हुए और मानसिंहजीके बाद महाराज फतहसिंहजीने राज्य किया। ये बड़े पराक्रमी थे। उनके कुंवर श्रीजसवंतसिंहजीका युवावस्थामें ही स्वर्गवास हो जानेसे महाराज श्रीफतेहसिंहजीके पौत्र श्री रघुनाथसिंहजी गादीपर आये। आप बड़े स्वामिभक्त थे। अपने मालिकको मालिक समझा। उन्होंने अपने स्वहस्तसे कस्टम व अबकारी हक्क बड़ापुर राज्यको कर्ज विशेष बढ जानेसे ऋणमुक्तिके हितार्थ इन हक्कोंको बड़ापुर नरेशके चरणोंमें समर्पण कर दिये। तबसे इन दो हक्कोंके सिवाय फारेस्ट ज्युडीशियल पालिस माफ इत्यादि २ तमाम दूसरे हक्कोंमें। आज तक स्वतंत्र रूपसे खांदु संस्थान भोग रहा है। महाराज रघुनाथसिंहजीके सुपुत्र विद्यमान महाराज साहब श्रीशंकरसिंहजी आजकल खांदु नगरीकी उन्नतिपर कटिबद्ध हैं। महाराज साहबका जैसा नाम है वैसे ही गुण हैं। आप संतोंकी सेवा करनेमें अग्रगण्य हैं। आपकी धर्मपरायणता सद्भावना सरलजीवन प्रशंसनीय है। इतनी बड़ी जागीर होते हुए भी आपने इस वैभवका कभी भी उपभोग करनेकी इच्छा प्रगट नहीं की है। आप जबसे कुंवर थे तबसे स्वोपार्जित द्रव्यसे ही अपने जीवनका पालन करना आपका आदर्श ध्येय था और आज भी स्वतः कृषी करके अपने

जीवनका निर्वाह करते हैं। श्रीमच्चिदानंद आनंदस्वरूपकी कृपासे आपके दो सुकुमार भोपालसिंहजी व गंगासिंहजी हैं। आपके जीवनश्रेणीको देखते हुए श्रीमद् भगवान् रामचंद्रजीका स्मरण हो आता है और आना ही चाहिए। क्यों कि ये भी उनके ही वंशज हैं। आपके दोनों कुमारोंका आदर्शजीवन लवकुशके समान प्रतीत होता है और श्रीमान् ज्येष्ठ कुमार भूपालसिंहजी साहब पितृभक्त आदर्श चरित्रशाली हैं। विद्वान्, गुणवान्, धैर्यवान् व अनेक सद्गुणोंसे युक्त हैं। श्रीमान् महाराज साहब श्रीगुरुदेव गोस्वामी नर्मदानंदजीके प्रसादसे कठिनसे कठिन दुःखमें भी धैर्य धारण कर दुःखमें भी सुख मनाते रहे हैं।

आपकी खांदुनगरीमें महान् पोलिटिकल व्यक्ति यथा रेसिडेंट मेवाड ए जी जी राजपूताना व कई युरोपियन आफिसर्स, श्रीमान् महारावलजी साहब बहादुर इत्यादि २ ने आतिथ्य सत्कार पाया।

खांदु संस्थानके सबंध लुनावाडा, झाबुआ, मालपूर, रतलाम, पीपलादा आदि बडे २ राज्य व सूर, ईडर, फेराट, भनकोडा इत्यादि संस्थानोंके साथ हुए हैं। आप श्रीमहाराणाश्री उदयपुरके दर्शनार्थ पधारे थे और वहां आपका उत्तम प्रकारसे सन्मान हुआ एवं श्रीमहाराणाजीके दरबारमें बैठक व दोनों ताजिम प्राप्त है। आपका अंतःकरण दीनदुःखीयोंकी दशाको देखते ही गद्गद होजाता है। आपकी अहर्निश यही भावना बनी रहती है कि मेरी प्रजा किस प्रकार समृद्धिशाली बने। आपने अजमेर मेयो कालेजसे डिप्लोमा प्राप्त किया है। वैसे ही आपके राजकुमारने भी डेली कॉलेज इंदोरसे डिप्लोमा प्राप्त की है। आप राजनीतिज्ञ हैं। खांदु नगरीमें श्री आचार्य ... [illegible] ...रमीके पदार्पणसे अनेक आत्माओंको

पदेश द्वारा कल्याण प्राप्त हुआ है। उसमें केवल श्रीमहाराज साहिब खांदूकी आंतरिक भावनाने ही विद्युत्शक्तिका काम किया है। उनके सरल प्रेमी स्वभावने ही तपस्वी श्रीआचार्यजीके हृदयमें स्थान प्राप्त किया है यह बात कम नहीं है बल्कि एस सतोंके ज्ञानामृतवचनोंका पान करनेसे नरेशश्रमके यथार्थ स्वरूपको पहिचाननेकी लालसा वृद्धिंगत होनेसे महाराज साहबके अंतःकरणमें एक प्रकारकी उत्कंठा होरही है कि कब सतोंके समागमसे सच्चे स्वरूपका पहचान सकू। आपके असीम प्रेमसे त्यागमूर्ति श्री परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीगुरु नर्मदानंदजी स्वामी, श्रीमद् त्याग मूर्ति स्वामीजी श्री नित्यानंदजी नेपाली व अनेक महान् व्यक्तियोंने खांदू नगरीको अपने पदकमलोंसे पावन किया है और महाराज साहबके दबे हुए सुसंस्कारोंमें कल्याणकी जागृति उत्पन्न कर दी है। इसी तरह तपोनिधि श्रीमद् जगद्गुरु आचार्यश्री कुंथुसागरजीने पधारकर विशेष रूपसे अन्तर्भावनामें परिवर्तन कर दिया है बल्कि कल्याणमार्गका दिग्दर्शन करा दिया है फलतः श्रीमहाराज साहब शंकरसिंहजी व उनके राजपरिवारमें विशिष्ट आत्मकल्याणकी भावना जागृत हुई है एवं सद्गुरुवोंके दर्शनकी लालसा बढी हुई है। हमारी आंतरिक श्रद्धा है कि सद्गुरुवोंका प्रसाद खांदू नरेश, राजपरिवार व प्रजावर्गको स्वमार्गगामी बनानेमें सहायक होगा।

राजभक्त-विनीत,

मदनमोहन सोमेश्वर भट्ट

(झालुआ निवासी)

कारभारी संस्थान खांदू.

— —

★ नरेशधर्मदर्पण ★
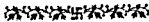
श्रीदं जिनं हरिहरं विमलं च बुद्धं,
नत्वा हिताय वरशान्तिसुधर्मपार्दौ ।
अथो वदे नृपतिधर्मसुदर्पणोऽयं,
सुखेन कुंथुगणिना च विरच्यते ऽथ ॥ १ ॥

संस्कृतार्थ—विघ्नविनाशनार्थं, नास्तिकतापरिहारार्थं शिष्टाचारपरिपालनार्थं गुणस्मरणार्थं च इष्टदेवतागुरुनमस्कारं कृत्वा चार्यैः प्रतिज्ञा क्रियते, किमिति ? विरच्यते, केन ? कुंथुगणिना, कुंथुसागराचार्य इति प्रख्यातेन सूरिणा, कथंभूतेन ? सुखेन धीमता व्याकरणतर्कसाहित्यादिशास्त्रकुशलेन, क अयं, किनाम नेय ? नृपतिधर्मसु र्पणोति विश्रुत [नरेशधर्मदर्पण] कथंभूत वर, अत्युत्तमनिर्विघ्नकारणात्, अथ:, किमर्थं विरच्यते— हिताय भव्यानां हिताय ऐहिकपारलौकिकसुखप्राप्त्यर्थं, क नत्वा, जिनं जयति दुर्भवकर्मशत्रून् इति जिनः तं वीतराग, हरिहरं, विमलमं बुद्धं वा, नास्त्यत्र नामनिर्विवादः, अपितु तद्योक्त गुणयुक्तं नत्वा, तथा च दीक्षाशिक्षागुरु आचार्यवर शांतिसागर सूरिं, सुधर्मसागरसूरिं च नत्वा अथोऽयं विरच्यते ॥

Having bowed to Shree Jineshwer Hrihar Budha this book named "Naresh Dharma-Darpan" [mirror showing the duties of a king] is written by Shree Digamber Acharya Kunthu sagarji for procuring universal peace

जिसने कर्मरूपी शत्रुको जीत लिया है एव अतरग बहिरग सपत्तिको देनेमें जो समर्थ हैं एसे गुणसे विशिष्ट जिन, हरिहर, बुद्धके नामसे प्रसिद्ध कोई भी क्यों न हों, जो आत्मकल्याण करनेकी इच्छा रखनेवाले भव्योंको व नरेशोंको पथप्रदर्शन करते हों,ऐसे परमदेव भगवान् एव मेरे दीक्षागुरु व शिक्षा गुरु श्री चारित्रचक्रवर्ति आचार्य शांति सागरजी व सुधर्मसागरजीके चरणोंमें नमस्कार कर यह नरेशधर्मदर्पण ग्रथकी रचनाकी जाती है । इसप्रकार विद्व च्छिरोमणि आचार्य श्री कुथुसागर महाराज प्रतिज्ञा करते हैं। प्रजाओंको न्यायपूर्वक पालन करनेका दायित्व जिन शासकों पर हैं उनके कर्तव्यपथको सूचित करना यह आचार्यश्री का उद्देश्य है। इसी पवित्र हेतुसे इस ग्रथका निर्माण किया जाता है ।

વીતરાગપરમદેવ જિન હરિહર બુદ્ધ દેવાચરણે નમસ્કાર કરીને ગ્રથ નિમાણ કરવા માટે આચાર્ય પ્રતિજ્ઞા કરે છે નરેશ ધર્મદર્પણ નામનો આ ગ્રથ સપૂર્ણ કલેશને નાશ કરવાવાળો તથા આ લોકમા અને પરલોકમા પણ મનવાછીત ફલ આપવાવાળો છે તે માટે આ ગ્રથ સ્વા નદરસિક,પરમદયાળુ પરમ વિદ્દદ્ય શ્રીકુથુસાગરનામના દિગબર જૈન આચાર્યે દુનીઆના સમસ્ત જીવોના હિતને માટે બનાવીને પ્રસિદ્ધ કર્યો છે માટે આ ગ્રથનુ સપૂર્ણ રીતે ધ્યાનપૂર્વક મનન કરવુ જોઇએ કે જેથી તેની પૂરેપુરી મહત્તા આત્મામા ઠસી જાય અને તેના રસા સ્વાદન થી પોતાનો આત્મા અલગ થવા ન પામે

वीतराग परमदेव जिन, हरिहर बुद्ध आदि नांवानें विख्यात इष्टदेवास नमस्कार करून आचार्य ग्रंथनिर्माण करण्याची प्रतिज्ञा करितात "नरेशधर्मदर्पण" नामक ग्रंथ सर्व दुःखाचा नाश करून इह व परलोकीं मनोवांछित फल देणारा आहे. स्वानंदरसिक परमदयाळु परम विद्वद्वर्य सुप्रसिद्ध दिगंबर जैनाचार्य श्री १०८ कुंथुसागर महाराज यांनीं जगातील सर्व जीवांचें हिताकरितां हा ग्रंथ तयार केला आहे तरी या ग्रंथाचें ध्यान व मननपूर्वक वाचन केल्यानें आत्मा आपल्या स्वस्वरूपाला प्राप्त करून घेऊ शकेल आणि आत्मसाम्राज्यरूपी स्वराज्यपदावर अधिष्ठित होऊ शकेल

ಯಾವನ ಪಂಚೇಂದ್ರಿಯಗಳನ್ನೂ, ರಾಗದ್ವೇಷಾದಿ ಕರ್ಮಗಳೆಂಬ ಶತ್ರುಗಳನ್ನು ಜಯಿಸಿರುತ್ತಾನೆಯೋ ಅಂಥಹ ಜಿನೇಶ್ವರ ಬುದ್ಧ, ಹರಿಹ ರಂದಿ ಹೆಸರುಗಳಿಂದ ಪ್ರಸಿದ್ಧನಾದ ವೀತರಾಗ ದೇವನನ್ನು ನಮಸ್ಕರಿಸಿ ಇಹ ಪರಲೋಕಗಳಲ್ಲಿ ಮನೋಭಿಲಷಿತ ಸಂಪತ್ಲಕ್ಷ್ಮಿಯನ್ನೂ ಅರ್ಥಾತ್ ಅಭೀಷ್ಟ ಫಲವನ್ನುಂಟು ಮಾಡುವಂಥ ಮತ್ತು ಸಮಸ್ತ ಕ್ಲೇಶಗಳನ್ನು ನಾಶ ಮಾಡುವ "ನರೇಶಧರ್ಮದರ್ಪಣ" ವೆಂಬ ಗ್ರಂಥವನ್ನು, ಸ್ವಾನಂದರಸಿಕರೂ ಪರಮದಯಾಳುಗಳೂ ಆದ ವಿದ್ವದ್ವರ್ಯ ಆಚಾರ್ಯ ಶ್ರೀ ಕುಂಥುಸಾಗರ ಸ್ವಾಮಿಗಳು ಸಮಸ್ತವಿಶ್ವದ ಶಾಂತಿಗೋಸ್ಕರವಾಗಿ ರಚಿಸಿರುತ್ತಾರೆ ಆದುದರಿಂದ ಅದನ್ನು ಮನನಪೂರ್ವಕವಾಗಿ ಪ್ರತಿಯೊಬ್ಬ ಭವ್ಯನೂ ಓದಬೇಕು ಈ ಗ್ರಂಥವನ್ನು ಓದುವುದರಿಂದ ಈ ಆತ್ಮನು ತನ್ನ ಯಥಾರ್ಥ ಸ್ವರೂಪವನ್ನು ಪ್ರಾಪ್ತಿಮಾಡಿಕೊಳ್ಳಲು ಸಮರ್ಥನಾಗುತ್ತಾನೆ ಮತ್ತು ಆತ್ಮಸಾಮ್ರಾಜ್ಯವೆಂಬ ಸ್ವರಾಜ್ಯವನ್ನೂ ಪಡೆಯುವನು

प्रश्नः—हे गुरुदेव ! इस दुनियामें उत्तम राजा कौन कहलाता है ? कृपया उनका लक्षण बतलाईये ।

उत्तर.—

दुष्टप्रजानां दमनं च कृत्वा शिष्टप्रजानां यमिनां च रक्षां ।
करोति यो दुर्व्यसनादिरिक्तः स एव श्रेष्ठो भुवि राजवर्गे ॥२॥
एवं सदा रक्षति राजतन्त्रं, शत्रुर्नृपः कोऽपि भवेन्न शक्तः ।
तत्कार्यसिद्धिं यदि वीक्ष्य शक्तो,भवेत्कदाचिद्भुवि नान्यथैव॥३॥

संस्कृतार्थ—हे गुरुदेव ! कोऽसौ श्रेष्ठशासक इति पृष्टे सति प्रतिपाद्यतेऽत्र प्रथमं । शासकस्य कर्तव्यं दुष्टनिग्रहं शिष्टपरिपालनं च, यतः अस्मिन् संसारे शांतिसुखादिकं भवेत्, दुष्टप्रजानां हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहरतानां परपीडाकरणशीलानां दमनं कर्तव्यं, तथा च शिष्टानां सज्जनानां परोपकारनिरतानां अभ्युदयनिश्रेयसमार्गप्रदर्शकानां यमिनां संयमिनां च सदा पालनं कर्तव्यं । दुष्टानां निग्रहेणैव शिष्टजनानां मार्गो निष्कंटको भवेत् येन च ते साधवो लोकहितकांक्षणं कुर्युः । पुनः कथंभूतः भवेत्स शासकः । दुर्व्यसनादिरिक्तः मद्यमांसमधुसेवन, चौर्याखेट परदारपण्यांगनासक्तिश्चेति सप्तव्यसनानि, एतानि संसारवृद्धि कारणानि इहामुत्र च दुःखहेतुकानि वर्तंते । ये च राजानो व्यसने ष्वेतेष्वासक्ता भवंति ते च राज्यपालनविषयेऽनासक्ताश्च भवेयुः, एवं च प्रजापरिपालनं सम्यक्तया न स्यात् । प्रजाश्च व्यसनाक्रांता भवेयुः । तस्माद्यथोक्तगुणविशिष्टः शासको यदि भवेत्तर्हि स एव राजवर्गे श्रेष्ठ इति कथ्यते ।

एव दुष्टनिग्रहशिष्टरक्षणादिविविना य आत्मपुत्रवत् प्रजापरिपालन करोति, राज्यतत्रस्य रक्षण च करोति स एव प्रशस्त शासक । तस्यांतरग कापि न ज्ञातु समर्थ, स किं विचारयति किं वा करोतीति ज्ञातु न शक्नोत्यय । स च सदा स्वकर्तिक रक्षणकार्येष्वेव प्रवर्तयति । यदा च तस्य कार्यसिद्धिर्भवति तस्य मधुरफल वारवारपिवु लोके प्राप्नोति स दृष्ट्वा कदाचित् जानति । यदि स राज्यतत्रप्रवीणा नृपति राज्यरक्षणोपाय गुप्त रूपेण न करोति तर्हि दुराचाररता राजान स ज्ञात्वा पूर्वत एव स्वकार्यसिद्धि प्रति य न कुर्वन्ति इति प्रजानां कष्टश्च सजायते । अतो राजनाति मार्गमनुसृत्य राज्यतत्ररक्षणोपाये कर्तव्य कार्यम् ।

(That King is the best) who conducts the administration of his body politic in such manner that no other ruler can decipher it before its complete achievement After complete accomplishment of his objects the other ruler may perhaps know the inner currents, but not otherwise or [tell them] Such a ruler, like Ramchandraji and Bharat is always free from distractions and also achieves his own welfare as well as that of others and at last attains Salvation

जो राजा दुष्टोंका निग्रह कर शिष्ट व साधु सतोंका सरक्षण करता है एव सपूर्ण व्यसनोंस (मद्य, मांस और मादरा का सवन करना, चोरी करना, शिकार करना,

परस्त्रीसेवन करना और वेश्यागमन करना ये सप्त व्यसन हैं।) रहित होते हुए अर्थात् सपूर्ण दुराचारसे रहित होते हुए अपने राज्यतंत्रको अर्थात् राज्यरक्षणनीतिको इस प्रकार सुरक्षित और गुप्त रखता है कि कोई भी दुराचारी राजा उसको जाननेमें समर्थ नहीं होसकता। किन्तु जब उस राज्य-तंत्रका कार्य सिद्ध हो जाता है तब उस कार्यको देखकर उस राज्यतंत्रका (राज्यरक्षणनीतिका) अभिप्राय भले ही लगा सकता है (जान सकेगा) अन्यथा कभी नहीं। यदि वह दुराचारी राजा प्रथमसे ही राज्यतंत्रको जानेगा तो अपने दुराचारको प्रबल बनानेमें तत्पर रहेगा, और सारे विश्वको पापरूपी समुद्रमें जरूर डुबा देगा। इसलिये वह उत्तम राजा अपने राज्यतंत्रको अनर्घ्यमणिके समान गुप्त रखता है। ऐसे राजाको उत्तम राजा कहते हैं। और ऐसे राजा ही भरतचक्रवर्ति रामच द्रजीके समान इस लोकमें स्वपरकल्याण करते हुए और स्वहस्तसे दानपूजादि करते हुए उत्तमोत्तम कार्य करके मोक्षलक्ष्मीका प्रियपति बनेगा अर्थात् वह राजा शीघ्रतासे मोक्ष जायगा। ऐसा जान कर पूर्वोक्त कार्य करनेसे ही नरजन्म सफल होगा। और राज्यकृत्य पूर्ण होगा। यदि पूर्वोक्त कार्य कोई राजा न करे तो उसका जीना मरना दोनों ही समान है ऐसा समझना चाहिए। इस प्रकार उत्तमराजाका यह लक्षण है।

જે રાજા દુષ્ટલોકોનુ શાસન કરીને સાધુ મહાત્માઓને સરક્ષણ કરે છે એવ જે રાજા સપૂર્ણ વ્યસનોથી (મદ્ય, માસ, દારુ સેવન, જુગાર, ચોરી, પરસ્ત્રી સેવન અને વેશ્યાગમન ભરવુ એ સાત વ્યસન છે) રહીત હોવા છતા [સપૂર્ણ દુરાચારથી મુક્ત હોવા છતા] પોતાના રાજ્યતત્રને અર્થાત રાજ્ય રક્ષણનીતિને એવી રીતે સુરક્ષિત અને ગુપ્ત રાખે છે કે કોઈપણ દુરાચારી રાજા તેને જાણી ન શકે, પણ જ્યારે તે રાજ્યતત્રનુ કાય સિદ્ધ થઈ જાય છે ત્યારે તે કાર્યને દેખીને તે રાજ્યતત્રનુ [રાજ્યરક્ષણ વિધિનુ] અનુમાન ભલે તે (દુરાચારી રાજા) કરી શકે, તે શિવાય તો નહિજ પણ જો તે દુરાચારી રાજા પ્રથમથીજ તે રાજ્યતત્રને સમજી જશે તો પોતાના દુરાચારરૂપી પ્રપચી જાળને સબળ બનાવવામા જરૂર તે મશગુલ રહેશે, એટલુજ નહિ પણ આખી દુનિઆને પાપરૂપી સમુદ્રમા ડુબાવી દેશે, તે રાજાએ (ઉત્તમ રાજાએ) પોતાના રાજ્યતત્રને ચિંતામણી સમાન સુરક્ષિત રાખવુ જોઈએ અને તે રાજા ઉત્તમરાજા તરીકે ઓળખાય એટલુજ નહિ પણ ભરતચક્રર્તિ રામચદ્રજીની માફક લોકમા સ્વપર કલ્યાણ કરીને અને પોતાના હાથે દાનપત્ર ભરી તથા ઉત્તમોત્તમ કર્મ કરીને મોક્ષરૂપી લક્ષ્મીને પ્રિય પતી બનશે અર્થાત મોક્ષગામી બનશે એવુ જાણીને પુર્વોક્તકાર્ય કરવામાજ નરત્વ મની સાર્થકતા છે મહા ચીત પૂર્વોક્ત કાર્ય કોઇ રાજા ન કરે તો એમનુ જીવવુ અને મરવુ બ ને સમાન છે એમ સમજવુ જોઈએ, એવી રીતે ઉત્તમ રાજાનુ લક્ષણ કહ્યુ છે

प्रश्न—श्री गुरुवर्या ! या जगामध्यें उत्तम राजा कोणास म्हणता येईल ? तें कृपा करून सांगा

उत्तर—जो राजा दुष्ट लोकांचें दमन करून साधु-सतांचें संरक्षण करितो आणि सर्व व्यसनापासून (मद्य मांस भक्षण करणें, चोरी करणें, शिकार करणें परस्त्रीसेवन करणें, वेश्यागमन, जुवा खेळणें, पक्षपाता दि पापांपासून) अर्थात् सर्व दुराचारापासून दूर राहून आपलें राजतंत्र व राज्यरक्षण नीतीस अशा रीतीनें गुप्त व सुरक्षित राखतो कीं दुसरा कोणीही दुराचारी अथवा नास्तिक त्यास जाणू शकू नये ज्या वेळेस त्या राज्य तंत्राचें किंवा नीतीचे कार्य पुरे होईल त्या वेळेसच तो [दुराचारी राजा] त्या राज्यतंत्राचें अथवा नीतिचें अनु मान करू शकेल,तर त्या दुराचारी राजास प्रथमपासूनच त्या राज्यतंत्राची अथवा नीतिची माहिती झाली तर तो दुराचारी राजा आपलें दुष्टकार्यास सिद्धीस नेणेस तयारीस राहील आणि तेणें करून संपूर्ण जगास पापरूपी समुद्रांत बुडविणेस कारणीभूत होईल उत्तम राजानें आपल्या राज्य तंत्रास अथवा नीतीस चिंतामणिरत्नाप्रमाणें किंबहुना त्याहीपक्षां जास्त सुरक्षित व गुप्त ठेविलें पाहिजे आणि असेच राजे सम्राट् भरतचक्रवर्ति श्रीमद् महाराजा श्री रामचंद्रजी आदि राजा सारखे स्वतः त्या हातून दानपूजा परोपकारादि उत्तमोत्तम कार्य करून स्वात्मचिंतन व दुस

त्याचे हितसाधन करून मोक्षरूपी लक्ष्मीस संपादन करतील हे निःसंशय खरे आहे. जे राजे असे (उत्तम राजाप्रमाणें) वर्तन न करतील त्यांचें जगणें व मरणें सारखेंच आहे अर्थात् ते जीवंत असतांही मृताप्रमाणें समजावें या प्रमाणें उत्तम राजाचें लक्षण आहे

ಪ್ರಶ್ನೆ —ಗುರುವರ್ಯರೇ ! ಈ ಲೋಕದಲ್ಲಿ ಯಾರು ಉತ್ತಮ ರಾಜರೆಂದು ಹೇಳಲ್ಪಡುವರು ? ಮತ್ತು ಅವರ ಲಕ್ಷಣವೇನು ? ದಯವಿಟ್ಟು ಹೇಳಿರಿ ?

ಉತ್ತರ—ಯಾವ ರಾಜನು ದುಷ್ಟಪ್ರಜೆಗಳ ನಿಗ್ರಹ ಮತ್ತು ಶಿಷ್ಟ ಪ್ರಜೆಗಳಲ್ಲಿ ಅನುಗ್ರಹ ಮಾಡುತ್ತಾನೆಯೋ, ಮತ್ತು ಸಮಸ್ತವ್ಯಸನಗಳಿಂದ (ಮದ್ಯ,ಮಾಂಸ,ಮಧುಗಳನ್ನು ಸೇವಿಸುವುದು ಕಳವು ಮಾಡುವುದು,ಬೇಟೆಯಾಡುವುದು ಜೂಜಾಡುವುದು,ಪರಸ್ತ್ರೀಗಮನ ಮತ್ತು ವೇಶ್ಯಾಗಮನ, ಈ ಏಳು ವ್ಯಸನಗಳು) ರಹಿತನಾಗಿ ಅರ್ಥಾತ್ ಸಮಸ್ತ ದುರಾಚಾರಗಳಿಂದ ನಿವೃತ್ತನಾಗಿ ತನ್ನ ರಾಜ್ಯತಂತ್ರ ರಾಜ್ಯರಕ್ಷಣ ನೀತಿಯನ್ನು ಬೇರೆ ಯಾರಾದರೂ ದುಷ್ಟರಾಜರು ತಿಳಿಯದಂತೆ ಸುರಕ್ಷಿತವಾಗಿಯೂ ಮತ್ತು ಗುಪ್ತವಾಗಿಯೂ ಇಟ್ಟುಕೊಳ್ಳುತ್ತಾನೆಯೋ, ಅವನೇ ಉತ್ತಮ ರಾಜನು ಆ ರಾಜನೀತಿಯ ಕಾರ್ಯವು ಸಿದ್ಧವಾದನಂತರ ಅವನ ರಾಜನೀತಿಯನ್ನು ಬೇರೆ ದುಷ್ಟರಾಜನು ಊಹಿಸಬಹುದು ಅಷ್ಟರವರೆಗೆ ತಿಳಿಯಲಸಾಧ್ಯವು ತನ್ನ ರಾಜ್ಯತಂತ್ರವು ದುರಾಚಾರಿಗಳಿಗೆ ಗೊತ್ತಾದರೆ ಅವರು ಮತ್ತಷ್ಟು ಹೆಚ್ಚಾಗಿ ದುರಾಚಾರಗಳನ್ನು ಬೆಳೆಸುವುದರಲ್ಲಿ ಸಂಲಗ್ನರಾಗುವರು ಮತ್ತು ಸಂಪೂರ್ಣ ವಿಶ್ವವನ್ನು ಪಾಪರೂಪೀ ಸಮುದ್ರದಲ್ಲಿ ಮುಳುಗಿಸುವರು ಆದುದರಿಂದ ಯಾವ ರಾಜನು ಅನರ್ಘ್ಯರತ್ನದಂತೆ ತನ್ನ ರಾಜ್ಯತಂತ್ರವನ್ನು ಗುಪ್ತವಾಗಿಟ್ಟುಕೊಳ್ಳುತ್ತಾನೆಯೋ ಅವನೇ ಉತ್ತಮ ರಾಜನೆಂದು ಹೇಳಲ್ಪಡುತ್ತಾನೆ ಇಂಥಹ ಉತ್ತಮ ರಾಜರು ಭರತಚಕ್ರವರ್ತಿ ರಾಜ ಚಂದ್ರರಂತೆ ಲೋಕದಲ್ಲಿ ಸ್ವಪರಕಲ್ಯಾಣವನ್ನು

ಮಾಡುತ್ತಾ ಮತ್ತು ಸ್ವಹಸ್ತದಿಂದ ದಾನಪೂಜಾದಿ ಉತ್ತಮೋತ್ತಮ
ಕಾರ್ಯಗಳನ್ನು ಮಾಡಿ ಮೋಕ್ಷಲಕ್ಷ್ಮಿಯ ಪ್ರಿಯಪತಿಗಳಾಗುವರು
ಅಂದರೆ ಅಂತಹ ರಾಜರು ಶೀಘ್ರ ಮುಕ್ತಿಸೌಖ್ಯವನ್ನನುಭವಿಸುವರು
ಈ ಪ್ರಕಾರ ತಿಳಿದು ಪೂರ್ವೋಕ್ತ [ದುಷ್ಟನಿಗ್ರಹಾದಿ] ಕಾರ್ಯಗಳನ್ನು
ಮಾಡುವುದರಿಂದ ನರಜನ್ಮ ಸಫಲವಾಗುವುದು ಮತ್ತು ರಾಜನ ಕರ್ತ
ವ್ಯದ ಪಾಲನೆಯೂ ಆಗುವುದು ಯಾವ ರಾಜನು ಪೂರ್ವೋಕ್ತಕಾರ್ಯ
ಗಳನ್ನು ಮಾಡುವುದಿಲ್ಲವೋ ಆ ರಾಜನ ಜನ್ಮ ಮತ್ತು ಮರಣ ಇವೆ
ರಡೂ ಸಮಾನಗಳೆಂದು ತಿಳಿಯಬೇಕು ಈ ಪ್ರಕಾರ ಉತ್ತಮ ರಾಜನ
ಲಕ್ಷಣ ತಿಳಿಯಬೇಕು

प्रश्न—हे स्वामिन् ! मध्यम राजा किसको कहते हैं
सो कृपया बतलाइये ।

उत्तर—

मध्यम राजाका स्वरूप

ब्रवीति य कार्यवशाद्यथैव, करोति कार्यं सुखद तथैव ॥
सर्वस्वनाशेऽपि न चान्यथैव, करोति भूपोस्ति स मध्यमो हि ॥

संस्कृतार्थ—यश्च नृपति राज्यरक्षणोपाय स्वेप्सित कार्यं च
तत्सिद्धि यावत् ना येस्सह गदति अपितु स्वान्तरे एव विचार्य
करोति, तथा चोक्त " हृदय च न विश्वास्य राजभि " राजभिः
कदाचित् स्वहृदयमपि न विश्वास्यम्, किं पुना परजनविषये ।
परंतु सदा स्वपरहितसाधकमेव कार्यं करोति, प्रजानां सुखाय च

यतते, अस्य वचनं प्रयाति, कदाचित् कार्यवशादेव वदति, बहु जल्पनेनाविश्वासश्चजायते त्वतः, इति हितमित्थमुपमत्र करोति । यच्च वचसा वदति तच्च कार्यकरणे करोति । प्राणेषु गतेष्वपि सर्वस्वविनाशेऽपि वाग्मार्गात् न प्रविचलति इत्थं सो मध्यमो नृपतिरिति ह्यय ॥३॥

That ruler is a mideocre ruler, who if he promises to do something due to certain circumstances fulfils his promises and secures the [illegible] by bringing a happy and successful end. [illegible] ruler occomplishes the object even at the cost of everything

राज्यवल्लभका अर्थात् राज्यपरायणोंके लिये [illegible] मनुष्य-जीवोंको संसार दुःखसे मुक्त करनेके लिये विचारोंको किसी भी मनुष्यके सामने नहीं करते हुए सब कार्योंको स्वयं गुप्तरीतिसे करना चाहिए और यदि कदाचित् उसे विशेष कार्यवशात् करना पड़े [illegible] (वास्तविकताका निश्चय करके और [illegible] करके, करना चाहिए । क्योंकि [illegible] जाते हैं अर्थात् अपने विचारोंको [illegible] करना पड गया तो जैसा विचार किया गया अर्थात् जैसा मुझसे कहा गया है उस प्रकार [illegible] सुखशांति देनेवाले [[illegible] ही राज्य [illegible]

यदि मैं कह करके भी (अन्य जीवोंके सामने अपने विचारोंको प्रगट करने पर भी) उस कार्यको मैं नहीं करूं तो मेरे समान इस दुनियामें पापी, दुराचारी, झूठा और कपाट मनुष्य कौन होगा ? इसलिए मेरा सर्वस्व [नाशवान वस्तुका) नाश हो जाय तो भी उसका मुझ कोई चिंता नहीं है, किंतु मैंने जो स्वपरजीवोंका कल्याण करनेवाले कार्य करनेका निश्चय किया है उस कार्यको करके ही छोडूंगा अन्यथा कभी भी नहीं करूंगा. ऐसे विचार जो राजा करता है वही राजा मध्यमराजा कहलाता है और वही राजा श्रेयांस राजाके समान साम्राज्यलक्ष्मीको भोग करके संपूर्ण स्वर्ग संपत्तिको पाकर और क्रमसे मोक्षलक्ष्मीका अधिपति बनेगा अर्थात् मोक्षमें जायगा, जो नरदेहका सार है

सारांश—पूर्वोक्त विधिको मननपूर्व पढ करके हृदयमें उतारना चाहिए जिससे नरजन्म सफल हो जाय इस प्रकार मध्य राजाका स्वरूप बताया है।

રાજ્યતંત્રને અર્થાત્ રાજ્યરક્ષણ વિધિને તથા સ્વપર જીવોને સંસારરૂપી દુઃખથી મુક્ત કરવાના વિચારોને કોઇપણ માણસને કહ્યા સિવાય એઇ કાર્યને પોતે ગુપ્તરીતે કરવું જોઇએ અને જો કદાચિત વિશેષ કાર્યવશાત્ પોતે બીજાને કહેવું પડે તો અર્થાત ભતભવિષ્યના પરિણામનો વિચાર કરી પોતાના વિચારો બીજા માણસ સમક્ષ પ્રગટ

મુકવા પડે તો જેવા વિચાર પ્રગટ થઈ ગયા હોય તેજ પ્રમાણે સ્વપર જીવોને સુખશાંતિ દેવાવાળા આ શ્રેષ્ઠ કાર્યને મારે કરવુ જોઈએ અને તેજ મારૂ પરમ કર્તવ્ય છે એવું તે વિચાર કહીને અર્થાત અન્ય-જીવોની સામે પ્રગટ કરીને પણ તે (શ્રેષ્ઠ કાર્ય) ન કરૂં તો આ દુની આમા મારા જેવો પાપી, દુરાચારી, અને અધમ મનુષ્ય કોણ હોઈ શકે (અર્થાત કોઈપણ ન હોઈ શકે) તે માટે મારી સર્વસ્વ વસ્તુનો ભલે નાશ થઈ જાય તો પણ મને તેની કંઈપણ ચિંતા નથી પરંતુ મેં સ્વપર જીવોના કલ્યાણાર્થે જે વિચાર પ્રગટ કર્યો છે તે મનને કર્યા સિવાય નહિ છોડીશ. એવો વિચાર જે રાજા કરે છે તે મધ્યમ રાજા કહેવાય છે અને તે રાજા શ્રેયાંસની માફક સંપૂર્ણ સ્વર્ગસંપત્તિ તથા સામ્રાજ્યલક્ષ્મી ભોગવીને ક્રમાનુસાર મોક્ષલક્ષ્મીનો અધિપતિ બનશે. અર્થાત તેજ રાજા જરૂર મોક્ષપદને પ્રાપ્ત કરશે કે જે નરદેહનો સાર છે

સારાંશ —પૂર્વોક્ત વિધિને મનનપૂર્વક વાંચીને હૃદયમાં ઉતારવી જોઈએ જેથી નરજન્મની સફલતા મળે

प्रश्न — हे गुरुवर्या ! मध्यमराजा कोणास म्हणतात ते कृपा करून सांगा

उत्तर—मध्यम राजाचे स्वरूप

राज्यतंत्र अर्थात राज्यरक्षणादिविधिच व स्वपरजीवांस संसाररूपी दुःखातून मुक्त करण्याचे कार्य कोणासही घालून न दाखविता स्वतः गुप्त रीतीने करावयास पाहिजे

अथवा काहीं कारणवशात् दुसऱ्याम सांगावें लागलेंच तर भूत भविष्यांत होणाऱ्या कार्यफलाच्या परिणामाचा पुन्हा पुन्हा विचार करून दुसऱ्या माणसा समक्ष जे विचार प्रगट केले गेले असतील त्या प्रमाणेंच स्वपर जीवांस सुखशांति मिळणें करतां मजला ते श्रेष्ठकार्य करावयास पाहिजे व तेंच माझे परम कर्तव्य आहे, आणि जर दुस यांचे समक्ष बोलून सुद्धां ते श्रेष्ठ कार्य माझ हातून झालें नाहीं तर या लोकामध्यें माझ्या सारखा दुराचारी व अधमाधम दुसरा कोणीही असू शकणार नाहीं, करितां मी स्वपर जीवांचे कल्याण करण्यासाठीं जे विचार प्रगट केलें असतील ते सिद्धीस नेणें करितां माझ्या सर्वस्वाचा नाश झाला तरी हरकत नाहीं येणें प्रमाणें ज्या राजाचें विचार असतील त्यास मध्यम राजा म्हणता येईल आणि असे राजे श्रेयांस राजा प्रमाणें साम्राज्य तथा स्वर्ग-लक्ष्मीस भोगून शेवटीं मोक्ष-लक्ष्मीस संपादन करतील सारांश वरील प्रमाणें मध्यम राजाचें लक्षण आहे

ಪ್ರಶ್ನೆ—ಹೇ ಸ್ವಾಮಿನ್! ಮಧ್ಯಮ ರಾಜನ ಸ್ವರೂಪವನ್ನು ದಯವಿಟ್ಟು ಹೇಳಿ

ಉತ್ತರ—ರಾಜನು ತನ್ನ ರಾಜ್ಯಲಕ್ಷ್ಮಿ ವಿಧಿಯನ್ನು ಮುಕ್ತ ಸ್ವಪರಜೀವಗಳನ್ನು ಸಂಸಾರದುಃಖದಿಂದ ಮುಕ್ತರನ್ನಾಗಿ ಮಾಡುವ ವಿಚಾರವನ್ನು ಬೇರೆಯವರ ಎದುರಿಗೆ ಹೇಳದೆ ಇಂಥ ಕಲ್ಯಾಣಕಾರಿಯಾದ

ಶ್ರೇಷ್ಠಕಾರ್ಯಗಳನ್ನು ಸ್ವಯಂ ಗುಪ್ತರೀತಿಯಿಂದ ಮಾಡಬೇಕು ಮತ್ತು ಒಂದಾನೊಂದು ಸಮಯ ವಿಶೇಷಕಾರ್ಯವಶದಿ ದ ಪ್ರಕಾಶಪಡಿಸಿ ಗುಪ್ತಕಾರ್ಯಗಳನ್ನು ಹೇಳುವ ಪ್ರಸಂಗ ಬಂದರೆ ಘನ ಘನ ಚೆನ್ನಾಗಿ ವಿಚಾರ ಮಾಡಿ [ಯಥಾರ್ಥವನ್ನು ನಿಶ್ಚಯಿಸಿ ಮತ್ತು ಹಿತಾಹಿತ ಫಲ ವನ್ನು ನಿಶ್ಚಯಿಸಿ] ಹೇಳಬೇಕು ಇಲ್ಲದಿದ್ದರೆ ಲೋಕದಲ್ಲಿ ಜನರು ವ್ಯರ್ಥ ಮಾತಾಡುವವನಿಗೆ ಬಕವಾದಿ ಎಂದು ಹೇಳುವರು ನಾನು ಜಗತ್ತಿನಲ್ಲಿ ಯಾವಾಗ ನನ್ನ ವಿಚಾರವನ್ನು ಪ್ರಗಟ ಮಾಡಿರುತ್ತೇನೆಯೊ ,ಅದರಂತೆ ಯೇ ಸಮಸ್ತ ಪ್ರಾಣಿಗಳಿಗೆ ಸುಖ ಶಾಂತಿಯನ್ನುಂಟು ಮಾಡುವ ಕಾರ್ಯ ವನ್ನು ಮಾಡ ವುದೇ ನನ್ನ ಪರಮ ಕರ್ತವ್ಯವೆಂದು ಭಾವಿಸುತ್ತನೆಯೋ ನಾನು ಇಂಥ ಕಾರ್ಯ ಮಾಡುವೆನೆಂದು ಜನರಲ್ಲಿ ಪ್ರಕಟನೆ ಮಾಡಿಯೂ ಆ ಕಾರ್ಯವನ್ನು ಮಾಡದಿದ್ದರೆ ಈ ಲೋಕದಲ್ಲಿ ನನಗೆ ಸಮಾನರಾದ ದುರಾಚಾರಿ, ಪಾಪೀ ಅಸತ್ಯಭಾಷೀ ಬಕವಾದೀ ಯಾರಿರುವರು? ಯಾರೂ ಇಲ್ಲ ಆದುದರಿಂದ ನನ್ನ ಸರ್ವಸ್ವವೆಲ್ಲಾ ಹಾಳಾದರೂ ಚಿಂತೆ ಇಲ್ಲ ನಾನ ಯಾವ ಸ್ವಪರಪ್ರಾಣಿಗಳಿಗೆ ಹಿತವನ್ನುಂಟು ಮಾಡುವ ಕಾರ್ಯ ವನ್ನು ಮಾಡಬೇಕೆಂದು ನಿರ್ಣಯಿಸಿದ್ದೇನೆಯೋ ಆ ಕಾರ್ಯವನ್ನು ಮಾಡ ಯೇ ಬಿಡ ವೆನು ಅನ್ಯಥಾ ಮಾಡುವುದಿಲ್ಲವೆಂದು ವಿಚಾರ ಮಾಡುತ್ತಾನೆ ಯೋ ಅವನೇ ಮಧ್ಯಮ ರಾಜನೆಂದು ಹೇಳಲ್ಪಡುತ್ತಾನೆ ಮತ್ತು ಆ ರಾಜನು ಶ್ರೇಯಾಂಸರಾಜನಂತೆ ಸಾಮ್ರಾಜ್ಯಲಕ್ಷ್ಮಿಯನ್ನನುಭವಿಸಿ ಸಮಸ್ತಸ್ವರ್ಗೀಯಸಂಪತ್ತಿಯನ್ನು ಹೊಂದಿ ಕ್ರಮದಿಂದ ಮೋಕ್ಷ ಲಕ್ಷ್ಮಿಯ ರಮಣನಾಗ ವನು ಅಂದರೆ ಮನಸ್ಯದೇಹದ ಸಾರಭೂತ ವಾದ ಮೋಕ್ಷವನ್ನು ಪಡೆಯುವನು

ಭಾವಾರ್ಥಃ—ಪೂರ್ವೋಕ್ತವಿಧಿಯನ್ನು ಮನದಟ್ಟವಾಗುವಂತೆ ಸ್ವಾಧ್ಯಾಯ ಮಾಡಿದರೆ ನರಜನ್ಮವು ಸಫಲವಾಗುವುದು ಈ ರೀತಿ ಮಧ್ಯ ಮ ರಾಜನ ಸ್ವರೂಪವನ್ನು ತಿಳಿಯಬೇಕು

प्रश्न—हे गुरुदेव ! कृपया अधमराजाका भी लक्षण बतलाइये ।

उत्तर—

करोमि चैव करोमि चैव, स्वैरं सदा जल्पति यत्र तत्र ।
न किंतु किंचित्परार्थकार्यं करोति मूढो ह्यधमो नृपो वा ॥४॥
स एव पापी नरकप्रवासी ह्यावेति मुक्त्वा ह्यधमं विचार ।
किलोत्तमं वाञ्छितद् सुखप्र कौ मध्यमं मोक्षगतिर्यतः स्यात् ॥५॥

संस्कृतार्थ—यश्च शासकः स्वैराचारविधिना वर्तयन् प्रजानां प्रति ' एव करोमि, एव करोमि, इति व्यर्थमव जल्पति, अपितु न किंचिदपि करोति, प्रजाहितकार्ये अनासक्तः सन् स्वविषयपोषण मेव करोति स च अधमः राजान प्राणिनां प्राणा , यदि त एव स्वकर्त यत्रिमुखा भवेयुस्तर्हि कथ जायते लोके प्राणिनः । परस्परेर्ष्याद्वेषकलहालीना समवाय काकशातिर्विनश्यत् । यश्च राज्यपद लब्ध्वापि पापार्जन करोति नृपति , इह लोकेपि तस्य शत्रवस्सजायते परलोकेपि नरकादि दुर्गतिमवाप्नोति, इति अधमस्य राज्ञः कर्तव्य विहाय उत्तमस्य मध्यमस्य वा कर्त व्यमनुसरणीय।लोके राज्यभोगादय पूर्वार्जितसुकृतोदयेन लभते, तेन चात्र पुन लोकहितकार्यं क्रियते तर्हि पुनश्च पुण्यमेव प्राप्नोति इति पुण्यानुबन्धन पुण्य स्यात् । तेन च अभ्युदय लब्ध्वा क्रमेण मोक्षसाम्राज्याधिष्ठितो भवति ॥ ५ ॥

That ruler is an ignorant, base ruler who brags everywhere that he does this thing and that thing but does nothing, which brings about his own welfare as the welfare of others. Such a ruler is a sinner and goes to Hell [Rawan who was such a ruler, never attained his own welfare or the welfare of others]

Any ruler who knowing what is base and having abandoned wicked thoughts, does what is best and conducive to desired objects attains salvation even though he may be a mediocre ruler (Ramchandraji and Bharat attained Salvation by following such practices)

Such a ruler having freed himself from all *worldly ties, attains Salvation by doing* his own as well as others' welfare and such a ruler is also free from all distractions Such a mediocre ruler before he speaks anything thinks ten times but when he promises he unfailingly does it

जो राजा अपनी इच्छानुसार अज्ञानतासे 'मैं यह करूंगा' 'मैं यह करूंगा' इस प्रकार जहाँ तहाँ अपनी बड़ाई और परकी बुराई करता फिरता है। किंतु वह पापी राजा अपना और दूसरोंका कल्याण करनेवाला कोई भी पुण्यकार्य किंचित् रूप भी नहीं करता है। (यदि करता है तो इतरजीवोंका अकल्याण करनेवाला घोर

पापमय ही कृत्य करता है और अहोरात्र सप्तव्यसनमें वं दुराचारमें ही मग्न होता हुआ अधेके समान हस्तमें आये हुए अमूल्य नरजन्मरूपी रत्नको फेंक देता है) ऐसे राजाको अधम राजा कहते हैं, अर्थात् ' तपोऽन्ते राज्य राज्यान्ते नरकम् ' शास्त्रकथनानुसार वह दुष्ट राजा घोरातिघोर नरकमें पड जाता है और वहां भी छेदन, भेदन, ताडन, मारणसे उत्पन्न हुए असह्य दु:खको भोगता हुआ व्यसन लम्पटी पापी राजा रावणके समान अनंतकालतक महता है । यह अधम राजाका लक्षण है '

इस प्रकार पूर्वमें कहे हुए उत्तम, मध्यम और अधम राजाओंके स्वरूपको जान करके और महान् क्लेशका मूल कारण अधमराजाके कृत्यको हालाहल विषके समान दूरसे ही छोड देना चाहिए और मनवांछित फल देने वाला उत्तम अथवा मध्यम राजाओंका कृत्य करके अपने आत्माको कर्मबंधकी परतंत्रतासे श्रीभरतचक्रवर्ति तथा श्रीमत महाराजा रामचंद्रजीके समान मुक्त करना चाहिए अर्थात् अपनी आत्माको मोक्षमें ही पहुंचा देना चाहिए कि अपनी आत्मा फिर संसाररूपी अग्निमें न पडे ।

यह बात जरूर ख्यालमें रखना चाहिए कि अधम राजाका ही कृत्य करके पापी दुष्ट दुराचारी राजा रावण आदिने अपनी आत्माको घोर नरकमें पहुंचा दिया था ।

इसलिए हे नरेन्द्रवर्गो ! हे भाग्यशाली राजाओ ! तुम लोगोंको रावणके माफिक कुकृत्य करके नरकमें नहीं जाना चाहिए किंतु क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न तीर्थंकर, चक्रवर्ति राजा राम चन्द्रजी आदिक समान अपने योग्य कृत्य करके अपनी आत्माको मोक्षमें ही पहुंचाना चाहिए।

आशीर्वाद —" नरेन्द्रधर्मदर्पण " नामक इस ग्रंथको बनानेवाले श्रीमत्परमपूज्य प्रातःस्मरणीय जगद्गुरु विशारद नीय विद्वच्छिरोमणि दिगंबर जैनाचार्य श्री कुंथुसागरजी महाराजका आप लोगोंको पूर्ण आशीर्वाद है।

शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!! सर्वेशास्तु सुवन !

જે રાજા પોતાની ઈચ્છાનુસાર અજ્ઞાનતાથી 'હું આ કરૂં હું આ કરૂ' એ પ્રમાણે જ્યાં ત્યાં પોતાની મોટાઈ અને ધરમની બુરાઈ કરતો ફરે છે અને જે રાજા પોતાના અને બીજાનું કલ્યાણ કરવા વાળા કોઈપણ પુણ્યકાર્યને રંચ માત્ર કદી કરતો નથી [અને કદાચીત કરે છે તો સ્વપર જીવોનું અહિત કરવાવાળા નિકૃષ્ટ કૃત્યજ કરે છે અને નિરાદીન દુરાચારમાંજ મશગુલ રહે જેવી રીતે આંધળો માણસ અમૂલ્ય રત્ન હાથમાં આવ્યું પથ્થર સમજી ફેંકી દે છે તેવી રીતે નર જન્મરૂપી રત્નને ફેંકી દે, તે રાજા અધમ અથવા નીચ ગણાય છે અથવા 'तपोऽन्ते राज्य राज्यान्ते नरकम्' ની માફક તે દુષ્ટ રાજા ઘોરાતિઘોર નરકમાં પડે છે અને ત્યાં પણ છેદન, ભેદન, તાડન, અને મારન કરવું અપાર અસહ્ય દુઃખને ભોગવતો વ્યસન લંપટી પાપી ...

અનતકાળ સુધી ત્યા (નરકમા) સડયા કરે છે આ અધમ રાજાનુ લક્ષણ છે

એજ પ્રમાણે ઉપર કહેલા ઉત્તમ, મધ્યમ અને અધમ રાજાના લક્ષણ જાણીને અને જે મહાન દુખ અને કલેશનુ મૂળકારણ અધમરાજાના કૃત્યને હળાહળ ઝેરની માફક દૂરથીજ છોડી દઈને અને મનવાછિત ફળ આપવાવાળા ઉત્તમ અથવા મધ્યમ રાજાઓના કૃત્ય કરીને પોતાના આત્માને કર્મબધરૂપી પરતત્રતાથી શ્રી ભરત ચક્રવર્તી તથા શ્રીમત મહારાજા રામચદ્રજી માફક મુકત કરવો જોઈએ. અર્થાત્ પોતાના આત્માને મોક્ષમા પહોંચાડવો જોઈએ જેથી કોઈપણ દિવસ સસારરૂપી અગ્નીમા પોતાનો આત્મા આવી ન પડે અને સાથે એ વાત પણ ધ્યાનમા રાખવી જોઈએ કે અધમ રાજાનુ કૃત્ય કરીને પાપી, દુષ્ટ, દુરાચારી રાવણે પોતાના આત્માને ઘોર નરકમા, ફેકી દીધો માટે હે નરેન્દ્રવર્ગ, હે ભાગ્યશાળીન રાજાઓ, રાવણની માફક કુકૃત્ય કરીને તમારા આત્માને નરકમા મોકલશો નહિ, પરતુ ક્ષત્રીયકુળમા ઉત્પન્ન થએલ તીર્થંકર ચક્રવર્તી રાજા રામચદ્રજીની માફક સુકૃત્ય કરીને પોતાના આત્માને મોક્ષગામી કરવો જોઈએ.

प्रश्न—हे गुरुदेव ! आता कृपा करून अधम राजाचे लक्षण सांगावें

उत्तर—जो राजा आपल्या अज्ञानतेमुळें " मी असें करीन तसें करीन " अशी पोकळ बढाई मारतो व दुस ऱ्याची निंदा करून स्वत ची प्रशसा करतो असा राजा स्वत चे अगर दुसऱ्याचे हिताकरितां लेशमात्रही पुण्य व सत्कार्य करीत नाहीं किंतु काहीं केलेच तर स्वत स

व दुसरेस अधोगतीस पोहचविणारे अत्यंत नीचकर्मच करीत असतो असा राजा ज्या प्रमाणें अधम मनुष्यास रत्न प्राप्त झाले असतांना सुद्धां त्याची कांहीं एक किंमत न जाणता दगड समजून फकून देतो त्या प्रमाणें नरजन्म रूपीरत्न प्राप्त झालेल्या अमूल्य संधीस वाया दवडतो अर्थात् " तपोऽन्ते राज्य, राज्यान्ते नरकम् " या म्हणी प्रमाणें रौरव नरकाचा धनी होता आणि रावणादि विषय लंपटी व दुराचारी राजासारखे छेदन भेदन आणि ताडन या पासून होणारी दुःखें भोगीत असतात या प्रमाणें अधम राजाचें लक्षण सांगितलें आहे.

सारांश--वर सांगितल्या प्रमाणें उत्तम, मध्यम व अधम राजाचें लक्षण जाणून घेऊन महान् पापाचें व दुःखाचें मूळ जें अधम राजाचें लक्षण त्यापासून तें "हाला हल विष आहे " असें समजून दूर राहिलें पाहिजे. आणि मनोवांछित फळ देणाऱ्या उत्तम व मध्यम राजाप्रमाणें वागून सम्राट् भरतचक्रवर्ती किंवा श्रीमद् महाराजा राम चंद्रादि सारखें आपळे आत्माच कर्मपाश तोडून मोक्षरूपी लक्ष्मीस संपादन केलें पाहिजे की जेणें करून पुनरपि जन्ममरणाची यातना सहन कराव्या लागू नयें

विशेषतः ही गोष्ट ध्यानांत ठेवावयास पाहिजे कीं, रावणानें अधमराजाचें लक्षण अंगीकारून शेवटीं ता नर

काचा धनी झाला म्हणून हे नरेशवर्ग हो ! हे भाग्यशाली राजा हो ! आपण रावणादि राजा प्रमाणें दुष्ट आचरण करून नरकाचे धनी न होता किंतु क्षत्रिय कुलोत्पन्न तीर्थंकर चक्रवर्ती श्री रामचंद्रजी आदि राजाप्रमाणें योग्य आचरण करून अर्थात् स्वपरहित करून मोक्ष लक्ष्मीस प्राप्त घेतले पाहिजे प्रजेनें सुद्धां हे लक्षांत ठेवावयास पाहिजे कीं उत्तम व मध्यम राजाचीं जीं लक्षणें आहेत त्याप्रमाणें जाणून व अशा (उत्तम व मध्यम) राजांच्या आज्ञा पाळून स्वतःचे आत्मकल्याण करून घ्यावयास पाहिजे राजांनीं रावणादि दुराचारी अधमराजा सारखे वागून नरकाचे धनी होऊं नये

ಪ್ರಶ್ನೆ —ಹೇ ಗುರುದೇವ ! ದಯವಿಟ್ಟು ಅಧಮರಾಜನ ಸ್ವರೂಪ ವನ್ನು ಕೊಡ ತಿಳಿಸಿ

ಉತ್ತರ—ಯಾವ ಂ ಜನು ತನ್ನ ~ಚ್ಛಾನುಸ ರವಾಗಿ ಅಜ್ಞಾನತೆ ಯಿಂದ ನಾನು ಇಂಥ ಕೆಲಸ ಮಾಡುತ್ತೇನೆ ನಾನು ಇಂಥಹ ಕೆಲಸ ಮಾಡುತ್ತೇನೆ ಅಂಥ ಕೆಲಸ ಮಾಡುತ್ತೇನೆಂದು ವೃಥಾ ಆತ್ಮಪ್ರಶಂಸೆ ಯನ್ನೂ ಮತ್ತು ಪರನಿಂದೆಯನ್ನೂ ಮಾಡುತ್ತಾ ತಿರುಗುತ್ತಾನೆಯೋ ಆ ಪಾಪೀ ರಾಜನು ಸ್ವಪರಕಲ್ಯಾಣವನ್ನು ಮಾಡುವಂಥ ಪುಣ್ಯಕಾರ್ಯ ವನ್ನು ಸ್ವಲ್ಪವಾದರೂ, ಮಾಡುವುದಿಲ್ಲ ಯಾವುದಾದರೂ ಕಾರ್ಯ ವನ್ನು ಮಾಡಿದ್ದಾದರೆ ಸ್ವಪರರಿಗೂ ಅಕಲ್ಯಾಣ ಮಾಡುವಂಥ ಘೋರ ಪಾಪಮಯವಾದ ಕೃತ್ಯವನ್ನೇ ಮಾಡುತ್ತಾನೆ ಮತ್ತು ಹಗಲಿರುಳು ಸಪ್ತ ವ್ಯಸನಗಳಲ್ಲಿಯೂ ದುರಾಚಾರದಲ್ಲಿಯೂ ಮಗ್ನನಾಗಿ ಯಾವ

ಆಶೀರ್ವಾದ

ನರೇಶಧರ್ಮದರ್ಪಣವೆಂಬೀ ಗ್ರಂಥವನ್ನು ರಚಿಸಿದ ಶ್ರೀಮತ್ಪರಮ ಪೂಜ್ಯ, ಪ್ರಾತಃಸ್ಮರಣೀಯ, ಜಗದ್ಗುರು, ವಿಶ್ವವಂದನೀಯ, ವಿದ್ವಚ್ಛಿರೋಮಣಿ, ದಿಗಂಬರ ಜೈನಾಚಾರ್ಯ ಶ್ರೀಕುಂಥುಸಾಗರಮುನೀಶ್ವರರು ತಮ್ಮೆಲ್ಲರಿಗೂ ಈ ಪ್ರಕಾರವಾಗಿ ಕೈವಲ್ಯಸಾಮ್ರಾಜ್ಯವನ್ನು ಪ್ರಾಪ್ತಿಸಲು ಸಾಮರ್ಥ್ಯವು ದೊರೆಯಲೆಂದು ಆಶೀರ್ವದಿಸುತ್ತಾರೆ

इस प्रकार श्री परमपूज्य विद्वच्छिरोमणि आचार्य
श्री कुंथुसागर महाराजके द्वारा विरचित
नरेशधर्मदर्पण पूर्ण हुआ

=* निवेदन. *=

जो श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमालाके उत्तमोत्तम सर्व ग्रंथोंका स्वाध्याय करना चाहते हैं वे १०१) देकर ग्रंथमालाके स्थायी सदस्य बनें। स्थायीसदस्योंको ग्रंथमालासे प्रकाशित व प्रकाश्य सर्व ग्रंथ विनामूल्य दिये जाते हैं।

निवेदक—

मंत्री—आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला

सोलापुर

।बाह्ये रसैरय चात्मा नैव तुष्यति पुष्यति ।
विहाय पड्रसान् एतः स्वरसे नौमि त सदा ॥८५॥

અર્થ —આ આત્મા બાહ્યરસો (ખાટો, મીઠો, તુરો, કડવો, ખારો, કષાયવો એ છ રસ) થી કદી પણ સતુષ્ટ થઇ શકતો નથી અને કદી પુષ્ટ પણ થઈ શકતો નથી. એનો વિચાર કરીને જે આચાર્ય છ રસીનો ત્યાગ કરી પોતાના આત્મરૂપી રસમાજ સદા સતુષ્ટ રહે છે એવા આચાર્ય પરમેષ્ટીને હુ સદા નમસ્કાર કરૂ છુ આ રસ પરિત્યાગ નામે ચોથુ તપ છે અને આચાર્યનો ચોથો ગુણ છે ॥ ૮૫ ॥

चित्तवेगनिरोधार्थ स्थाने निर्जन्तुके वसन् ।
एकान्त यतते स्वात्तु स्वपदे योऽपि नौमि तम् ॥ ८६ ॥

અર્થ —જે આચાર્ય પોતાના મનના વેગને રોકવા માટે જીવજતુ રહિત કોઈપણ એકાત સ્થાનમા નિવાસ કરે છે, અને પોતાના શુદ્ધ આત્મામા લીન રહેવા માટે પ્રયત્ન કરે છે એવા આચાર્યને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ વિવિક્તશય્યાસન નામે પાચમુ તપ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો પાચમો ગુણ છે ॥ ૮૬ ॥

शीते कर्मविनाशार्थं नद्यास्तीरे तरोस्तले ।
वर्षाकाले तु ग्रीष्मे हि गिरौ सतिष्ठते यतिः ॥ ८७ ॥

અર્થ —જે આચાર્ય પોતાના કર્મોના નાશ કરવા માટે શિયાળામા નદીના કિનારે ધ્યાન ધરે છે, વર્ષાઋતુમા વૃક્ષની નીચે ધ્યાન ધારણ કરે છે અને ઉનાળાની ઋતુમા પર્વત ઉપર ધ્યાન ધરે છે આ કાયક્લેશ નામનુ છઠ્ઠુ તપ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો છઠ્ઠો ગુણ છે ॥ ૮૭ ॥

एव पद्भेदक बाह्य तपः मोक्त सुदुर्द्धरम् ।
अधुना मोच्यते नूनमन्तरग हि पड्विधम् ॥ ८८ ॥

અર્થ—ઉપર મુજબ અત્યત દુર્દ્ધર (જેને કાયર પુરુષ ધારણ ન કરી શકે) એવા છ પ્રકારના બાહ્ય તપોનુ નિરૂપણ કર્યુ હવે આગળ છ પ્રકારના અતરગ તપોનુ નિરૂપણ કરવામા આવે છે ॥૮૮॥

गुरवे कृतदोष यो निवेदयति शुद्धधीः ।
न करोति पुनर्दोष तृप्तः स्वात्मनि नौमि तम् ॥८९॥

અર્થ —જે આચાર્ય શુદ્ધબુદ્ધિને ધારણ કરી પોતાના કરેલા દોષોને જેવા ને તેવાજ સ્વરૂપમા ગુરુના સામે મ્હે છે (એમા કોઇપણ પ્રકારની લજ્જા ગણતા નથી) વળી ફરીથી તેવો દોષ કદીપણ કરતા નથી, અને પોતાના આત્મામા તૃપ્ત રહે છે એવા આચાર્ય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ પ્રાયશ્ચિત નામનુ પહેલુ અતરગ તપ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો સાતમો ગુણ છે ॥ ૮૯ ॥

सम्यग्दग्बोधचारित्रैर्भूपितानां हि योगिनाम् ।
कुरुते विनय भक्त्या तृप्तः स्वात्मनि नौमि तम् ॥९०॥

અર્થ —જે આચાર્ય સમ્યગ્દર્શન, સમ્યક્જ્ઞાન, અને સમ્યક્ ચારિત્રથી શોભિત એવા મુનિરાજનો વિનય કરે છે (ભક્તિપૂર્વક તેમનો આદરસત્કાર કરે છે) અને પોતાના આત્મામા સદા લીન રહે છે એવા આચાર્ય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ વિનય નામે બીજુ અતરગ તપ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો આઠમો ગુણ છે ॥ ૯૦ ॥

त्यक्त्वा मान प्रमाद यो बालवृद्धादियोगिनाम् ।
वैयावृत्य सदा कुर्वन् स्वपद नौमि त स्थिरम् ॥९१॥

અર્થ — જે આચાર્ય પોતાનુ માન, અપમાન અથવા પ્રમાદને છોડી દઈ બાલક અથવા વૃદ્ધ મુનિયોનુ વૈયાવૃત્ય (સેવા, ચાકરી) કરે છે અને સદા પોતાના આત્મામા સ્થિર રહે છે એવા આચાર્યની હુ સ્તુતિ કરૂ છુ આ વૈયાવૃત્ય નામે ત્રીજુ અતરગ તપ છે, અને આચાર્ય પરમેષ્ટીના નવમો ગુણ છે ॥ ૯૧ ॥

येन ज्ञानादिवृद्ध्यर्थं पठ्यते पाठ्यते श्रुतम् ।
स्वस्वाद स्वादयन् धीर' स्वाध्यायतपसा युतः ॥ ९२ ॥

અર્થ —એવા એ આચાર્યવર્ય પોતાના જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય વધારવાને માટે અનેક જૈનધર્મના શાસ્ત્રો ભણે છે અને ભણાવે છે તથા એ ધીરવીર પોતાના આત્મજન્ય રસના સ્વાદનુ આસ્વાદન કરતા રહે છે એવી રીતે હમેશા સ્વાધ્યાયરૂપી તપશ્ચરણથી સદા સુશોભિત રહે છે આ સ્વાધ્યાય નામે ચોથુ અતરગ તપ છે, અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો દશમો ગુણ છે ॥ ૯૨ ॥

बाह्यन्तर्भेदतः सग तावद द्विविध हि य ।
त्यक्त्वा पुनः शरीराद्धि निर्मोहोऽभूत्स्वसिद्धये ॥ ९३ ॥

અર્થ —એ આચાર્ય બાહ્ય અને અતરગ બન્ને પ્રકારથી આપ વાવાળા ચોવીસ પ્રકારના દુખકર પરિગ્રહોનો ત્યાગ કરે છે અને પોતાના આત્માની શુદ્ધતા પ્રગટ કરવા માટે શરીરથી પણ મમત્વનો ત્યાગ કરે છે આને વ્યુત્સર્ગ નામનુ તપશ્ચરણ કહે છે આ પાચમુ અતરગ તપ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીના અગિયારમો ગુણ છે ॥ ૯૩ ॥

त्यक्त्वार्तरौद्रदुर्ध्यानं धर्मं शुक्ल करोति यः ।
आत्मनात्मनि चात्मान ध्यायते नौमि त मुदा ॥ ९४ ॥

અર્થ —જે આચાર્ય આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાન એ બે અશુભ

ધ્યાનોનો ત્યાગ કરી ધર્મધ્યાન અને શુકલધ્યાન એ બે શુભ ધ્યાનોને ધારણ કરે છે, જે હમેશા પોતાના આત્મામાં પોતાના આત્માની દ્વારાજ પોતાના આત્માનુ ધ્યાન ધરે છે એવા શ્રી આચાર્યને હુ પ્રસન્ન થઇને નમુ છુ અને ધ્યાન નામનુ તપશ્ચરણ કરૂ છે આ છઠુ અંતરંગ તપ છે અને આચાર્યનો બારમો ગુણ છે ॥ ૯૪ ॥

स्वर्मोक्षद क्लेशहर सुखद शांतिद तथा ।
तपो द्वादशधा प्रोक्त स्वसुखप्रापक मया ॥ ९५ ॥

અર્થ —એ પ્રમાણે મેં બારે પ્રકારના તપશ્ચરણોનુ સ્વરૂપ કહ્યુ એ બારે તપશ્ચરણો સ્વર્ગ મોક્ષને આપવાવાળા છે સમસ્ત ક્લેશોને દૂર કરવાવાળા છે સુખ આપવાવાળા છે શાંતિ આપનારા છે અને પોતાના આત્મજન્ય સુખને પ્રાપ્ત કરાવનારા છે ॥ ૯૫ ॥

દશધર્મનુ સ્વરૂપ

स्वपदद्योतका धर्मा दशापत्तिविनाशकाः ।
वर्ण्यन्ते हि क्षमाद्यास्तु शांतिसौख्यप्रदा नृणाम् ॥९६॥

અર્થ —હવે હુ દશ ઉત્તમધર્મ (ઉત્તમક્ષમા, ઉત્તમમાર્દવ, ઉત્તમઆર્જવ, ઉત્તમશૌચ, ઉત્તમસત્ય, ઉત્તમસંયમ, ઉત્તમત્યાગ, ઉત્તમઆકિંચન્ય અને ઉત્તમબ્રહ્મચર્ય) નુ વર્ણન કરૂ છુ આ સર્વે ધર્મ પોતાના આત્માના શુદ્ધ સ્વરૂપને પ્રગટિત કરવાવાળા છે સમસ્ત આપત્તિઓનો નાશ કરવાવાળા છે, અને મનુષ્યોને હમેશા શાંતિ અને સુખ આપનારા છે ॥ ૯૫ ॥

क्रोधत्यागात्क्षमाधर्मो जायते मोक्षदा नृणाम् ।
ज्ञात्वेति क्रोधमुज्झित्वा स्वधर्मस्य स्तवीमि तम् ॥ ९७ ॥

અર્થ—ક્રોધકષાયનો ત્યાગ કરવાથી મનુષ્યોને મોક્ષસુખ આપવાવાળો ઉત્તમક્ષમા ધર્મ પ્રાપ્ત થાય છે આમ સમજી આચાર્યશ્રી ક્રોધને છોડી દઈ પોતાના ક્ષમારૂપ આત્મધર્મમા લીન રહે છે એવા આચાર્ય દેવની હુ સ્તુતિ કરૂ છુ આ ઉત્તમક્ષમા નામે પ્રથમ ધર્મ છે અને આચાર્યપરમેષ્ઠીનો તેરમો ગુણ છે

ભાવાર્થ—કહ્યુ છે કે **क्षमा वीरस्य भूषणम् ।** ત્યારે ધીરવીર પુરુષોનુ આભૂષણ શુ ? તો ખરેખર એ ઉત્તમક્ષમા છે હે ભવ્યજીવો ! ઉત્તમ ક્ષમા એવો ઉત્તમ ધર્મ છે કે તેને જો ચારિત્રમા ધારણ કરવામા આવે તો ગમે તેવી આપત્તિમાથી સહેલાઈથી બચી જવાય છે કોઈ આપણને કટુ વચન કહી જાય, માર મારે, તાડન કરે પણ તેવા સમયે ગુસ્સો ન કરતા શાત ભાવે સહન કરવાથી દુઃખ દેનાર મનુષ્ય પણ નરમ બની જાય છે તેના આત્મપરિણામ સુધરી જાય છે આમ ઉત્તમ-ક્ષમાથી આત્માનુ અને પર આત્માનુ કલ્યાણ થઈ શકે છે આથીજ આચાર્ય દેવશ્રીએ દશધર્મમા પહેલો આ ધર્મ વર્ણવ્યો છે આચાર્યદેવ પણ શુદ્ધિ ભક્તિપૂર્વક આ ઉત્તમ ક્ષમા ધર્મનુ પાલન કરે છે ॥ ૯૭ ॥

भवेन्मार्दवधर्मो हि, मानत्यागात्सुखप्रदः ।
ज्ञात्वा त्यक्त्वेति मान यो, तिष्ठत्यात्मनि नौमि तम्॥९८॥

અર્થ—માનકષાયનો ત્યાગ કરવાથી સર્વે જીવોને સુખ આપવાવાળો માર્દવ ધર્મ પ્રગટ થાય છે એમ સમજી જે આચાર્ય માન કષાયનો ત્યાગ કરી પોતાના આત્મામા લીન રહે છે તેમને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ ઉત્તમ માર્દવ નામનો બીજો ધર્મ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો ચૌદમો ગુણ છે

ભાવાર્થ—દુષ્ટ અને દુખકર એવી ચાર કષાયો (ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ) મા માન કષાય બીજા કષાય છે આ કષાયથી જીવ ઘડી ઘડીમા પોતાને સસારી સુખમા રાચતો જોઈ ભારે અહકાર ધારણ કરે છે પણ ચેતન ભાઈ (આત્મા) એ ધ્યાનમા લેવુ જોઇએ કે સાસારિક સુખ અનિત્ય છે કૃત્રિમ છે સાતાવેદનીય કર્મનુ ફળ છે અહકાર રાવણજેવા મહાન નરપતિઓનો નથી રહ્યો તો આપણે માણસો તે શા વિસાતમા ? મતલબ કે અહકાર બહુ અનિષ્ટ છે ભલાભલા ભૂપતિઓને ઘડીના છઠ્ઠા ભાગમા પાયમાલ કરી નાખે છે એમ સમજી મહામુનિરાજ શ્રી આચાર્ય પરમેષ્ઠી આ દુષ્ટ શત્રુનો ત્યાગ કરી ઉત્તમ માદવ ધર્મનુ પાલન કરે છે માટે હે ભવ્યજીવો ! તમે પણ આત્મકલ્યાણ માટે કદી પણ અહકાર ન કરી, શુદ્ધ અને સાચા ગુરુદેવની સહાય લઈ ઉત્તમ માર્દવ ધર્મ ધારણ કરો. ॥ ૯૮ ॥

भवेदार्जवधर्मो हि मायात्यागान्मनोहरः ।

इत्थ मायाग्रह मुक्त्वा तुष्ट' स्वात्मनि नौमि तम् ॥९९॥

અર્થ—એ પ્રમાણે માયાચારનો ત્યાગ કરવાથી મનોહર આર્જવ ધર્મ પ્રગટ થાય છે આમ સમજીને જે આચાર્ય માયારૂપી પિશાચનો ત્યાગ કરી પોતાના આત્મામા સતુષ્ટ રહે છે એવા આચાર્ય ને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ ઉત્તમ-આર્જવ નામે ત્રીજો ધર્મ અને આચાર્યશ્રીના પદરમો ઉત્તમ ગુણ છે

ભાવાર્થ—"અહકારીનો મિત્ર માયાચારી" આ ઉપરથી વસ્તુજ સમજી શકાય કે જ્યારે અહકાર દુખકર અને દુષ્ટ શત્રુ છે તો માયાચારી કેમ નહિ હોય ? મતલબકે માયાકષાય પણ ચેતન ભાઈનો દુષ્ટ શત્રુ છે માયાને આધીન થયેલા મનુષ્યોના કોઈ જરા પણ વિશ્વાસ કરી શકતુ નથી, કારણ કે માયાચારી મનુષ્યો ભલે કાંઈ,

કરે કાઈ બીજુ, અને માર્ગે મગાવે કાઈ તરન જુદુ જ માયાથી મનુષ્ય હંમેશા બીજો કેવી રીતે દુઃખી થાય, ક્યારે મારા કરતા ઉતરતો થાય, ક્યારે તેનો નાશ થાય આવી અનેક કલ્પનાઓથી ભરપુર પેંતરાઓ મનમા ગોઠવ્યા કરે છે અને કેટલીક વાર જાતે ન કરે તો અનુમોદ નાથી બીજા પાસે પણ પોતાના શત્રુને (આર્જવધર્મ પાળતા મનુષ્યને) હેરાન કરાવે છે આથી આ માયામ્પાપનો ત્યાગ કરવો જોઈએ એમ સમજી મહામુનિરાજ માયાનો ત્યાગ કરી ઉત્તમ આર્જવ ધર્મનુ પાલન કરે છે માટે હે ભવ્યજીવો ! તમે પણ એ ઉત્તમ-આર્જવ ધર્મનુ આત્મકલ્યાણ માટે શુદ્ધિપૂર્વક પાલન કરો ॥ ૯૯ ॥

सत्यधर्मो भवेन्नूनमनृतस्य विवर्जनात् ।
बुध्वा त्यक्त्वेति योऽसत्यं स्वधर्मे नौमि तिष्ठति ॥१००

અર્થ —મિથ્યા ભાષણ અથવા જૂઠુ બોલવાનો ત્યાગ કરવાથી અવશ્ય ઉત્તમ સત્યધર્મ પ્રગટ થાય છે આમ સમજીને જે આચાર્ય અસત્ય ભાષણનો ત્યાગ કરીને પોતાના આત્મામા સદા લીન રહે છે તેમને હુ નમસ્કાર ભક્તિપર્વક કરૂ છુ આ ઉત્તમ સત્યનામે ચોથો ધર્મ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો સોળમો ગુણ છે

ભાવાર્થ —"જૂઠુ બોલે ને ઘણી, પાછળથી પસ્તાય" એ કહેવત મુજબ જૂઠુ બોલનાર વ્યક્તિ છેવટે ઘણો હેરાન થાય છે જૂઠુ બોલનાર ધિક્કારને પાત્ર થાય છે જ્યા ત્યા સાચુ જૂઠુ કરી તે લોકોનુ અહિત હંમેશા કરે છે તેના બદલામા તેને ઘણુ દુઃખ પાછળથી સહન કરવુ પડે છે જ્યારે સત્ય બોલનાર માણસનો છેવટે જય થાય છે કહેવત પણ છે કે सत्यमेव जयते । માટે આવો વિચાર કરી ગુરુદેવ સત્ય ધર્મનુ પાલન કરે છે ઉત્તમ સત્યધર્મનુ પાલન કરનાર જીવો આ ભવમા અને પરભવમા ઉચ્ચ કોટિનુ અત્યત સુખ ભોગવે છે ॥૧૦૦

शौचधर्मो भवेन्नून लोभत्यागात्सुखावहः ।
लोभं त्यक्त्वेति स्वात्मानं ध्यायते यो हि नौमि तम् ॥१०१

અર્થ —લોભકષાયનો ત્યાગ કરવાથી સર્વે જીવોને સુખ આપવાવાળો ઉત્તમશૌચ ધર્મ પ્રગટ થાય છે આમ વિચારીને જે આચાર્ય લોભનો ત્યાગ કરી પોતાના આત્માનું ચિંતવન કરે છે તેમને હું નમસ્કાર કરૂં છું આ શૌચ નામે પાંચમો ધર્મ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો સત્તરમો ગુણ છે

ભાવાર્થ —" લોભને થોભ નહિ ", એ કહેવત મુજબ લોભ કષાય એવો છે કે જે માણસ તેના મોહપાશમાં ફસાઈ જાય છે, તે કદી પણ સુખ પામી શકતો નથી મફત શ્રીફળ મેળવવાની ઈચ્છાવાળો લોભી માણસ જેમ મરણને શરણ થાય તેમ સંતોષી મનુષ્ય દુઃખી થતો નથી એટલે કે લોભનો ત્યાગ કરવામાં આવે ત્યારેજ સદ્‌ગુણ પ્રગટ થાય, અને તે સદ્‌ગુણને ઉતમશૌચ ગુણ કહે છે આથી મહા મુનિરાજ લોભનો ત્યાગ કરીને જીવન આત્મચિંતવનમાં પસાર કરે છે જેથી આત્મકલ્યાણનો સુમાર્ગ મોકળો કરી મૂકે છે ॥१०१॥

भवेदक्षनिरोधाद्धि संयमः क्लेशनाशकः ।
त्यक्त्वेत्यक्षसुखं वृत्तः स्वसुखे यो हि नौमि तम् ॥१०२॥

અર્થ — સમસ્ત ઇન્દ્રિયોનો નિરોધ કરવાથી એટલે કે વશ કરવાથી ક્લેશોને દૂર કરનારો સંયમધર્મ પ્રગટ થાય છે આમ સમજીને જે આચાર્ય ઈંદ્રિય સુખોનો ત્યાગ કરી પોતાના આત્મજન્ય સુખમાં તલ્લીન રહે છે તેમને હું નમસ્કાર કરૂં છું આ ઉત્તમ સંયમ નામે છઠ્ઠો ધર્મ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો અઢારમો ગુણ છે ॥

ભાવાર્થ—ઈંદ્રિયજન્ય સુખ અને અતીન્દ્રિયજન્ય સુખ

માણસો ઘડીભર કૃત્રિમ આનંદ પામી શકે છે કિન્તુ આત્માનો આનંદ તો આત્મસ્વરૂપને સમજવા માટે તેમાં લીન રહેવાથી મળે છે માટે આચાર્ય મહારાજ ઇન્દ્રિયોથી મળતા સુખનો નિરોધ કરે છે ઇંદ્રિયોને વશ કરી લે છે અને સાંસારિક અશાશ્વત સુખને તજવા પ્રયત્ન કરે છે આથી ઉત્તમસંયમ નામે ગુણ પ્રાપ્ત થાય છે, જે સંયમ ધર્મ આ ભવસાગર તરવા માટે ચેતનરૂપ નાવિકને ઉત્તમ હલેસાની ગરજ સારે છે માટે ઉત્તમસંયમ પ્રાપ્ત કરવા માટે બનતો પ્રયત્ન ભવ્યજીવોએ કરવોજ જોઇએ ॥ ૧૦૨ ॥

इच्छारोधात्तपोधर्मः श्रेयानिति विचारयन् ।
इच्छारोधं हि यः कुर्वन्नास्ते स्वात्मनि नौमि तम् ॥१०३॥

અર્થ—સર્વ પ્રકારની ઇચ્છાઓને રોકવાથી તપ નામે ઉત્તમ ધર્મ પ્રગટ થાય છે, જે આચાર્ય આ તપોધર્મને સર્વોત્કૃષ્ટ માને છે અને એજ વિચાર કરી સદા ઇચ્છાઓનો નિરોધ કરતા કરતા પોતાના આત્મામાં લીન રહે છે એવા શ્રી આચાર્યને હું નમસ્કાર કરૂં છું આ તપ નામે સાતમો ધર્મ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો ઓગણીસમો ગુણ છે

ભાવાર્થ—"ઇચ્છા વિચ્છુના સમાન છે" જેમ વિચ્છુ એટલે વિંછિનો ડંખ મારીને દુઃખ આપે છે તેમ ઇચ્છા પણ માણસને પળવારમાં અનેક ઘોર કુકર્મ કરવા માટે મોહપાશમાં જકડી દે છે ઇચ્છાને વશ થઇ માણસ કુકર્મ કરતા પીછેહઠ કરતો નથી પણ જરૂર તેને તેમાં કરેલા કુકર્મોનો બદલો ભોગવ્યા વિના છુટકોજ નથી ઇચ્છાને વશ થઇ માણસ જો સુકૃત્ય કરે તો તે સારી ઇચ્છા ગણાય પણ મહા મુનિરાજ તો ઇચ્છા માત્રનો ત્યાગ કરે છે અને ઇચ્છાનો નિરોધ થવાથીજ ઉત્તમતપોધર્મનું યથાવિધિ પાલન કરી શકે છે તપોધર્મનું

પાલન કરવાથી ઉત્તમ સુખ મોક્ષરૂપી સાચુ સુખ સરળતાથી પ્રાપ્ત કરે છે ॥ ૧૦૩ ॥

त्यागधर्मो भवेदन्यभावाना वर्जनादिति ।
परभाव त्यजन् कुर्वन् दान स्व वेत्ति नौमि तम् ॥१०४॥

અર્થ.—પોતાના આત્મામાથી ભિન્ન પરભાવોનો સર્વથા ત્યાગ કરવાથી ત્યાગધર્મ પ્રગટ થાય છે એથી જે આચાર્ય બીજા ભાવોનો ત્યાગ કરી જ્ઞાન વિગેરેનુ ઉત્તમ દાન કરે છે, અને પોતાના આત્માના સ્વરૂપને સારી રીતે ઓળખે છે એવા આચાર્યને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ ઉત્તમત્યાગ નામે આઠમો ક્રમ છે અને શ્રી આચાર્ય પરમેષ્ઠીના વીસમો ગુણ છે

ભાવાર્થ—પરભાવ એટલે આત્માના ઉચ્ચ ભાવોથી વિરુદ્ધ સાસારિક મોહમાયાના ભરેલા વિચારો આ ભાવનાઓ અતિ દુઃખકર છે તેનો ત્યાગ કરીને આત્મ-સુખ મેળવવા પ્રયત્ન કરવો જોઇએ. ઉત્તમત્યાગ ધર્મ ચાર પ્રકારના દાન કરવાથી પ્રગટ થાય છે દાન ચાર પ્રકારના આ પ્રમાણે છે— (૧) આહારદાન, (૨) શાસ્ત્રદાન, (૩) ઔષધદાન, (૪) અભયદાન. દરેક ભવ્યજીવો પોતાની યથા શક્તિ પ્રમાણે દાન કરવુજ જોઇએ. વ્રત વિગેરે સમયે અને જૈનીઓએ પર્યુષણના ત્યાગધર્મના દિવસે જરૂર ચારે પ્રકારના દાનમા પોતાથી બનતો ફાળો આપવો જોઇએ જેથી આત્માનુ અને પર આત્માનુ કલ્યાણ થઈ શકે, અને ઉચ્ચ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકાય ॥ ૧૦૪ ॥

बाह्याभ्यन्तरसगौ हि त्यक्त्वा स्वात्मनि तिष्ठति ।
भेदविज्ञानशस्त्र य करे धृत्वा स्तवीमि तम् ॥ १०५ ॥

અર્થ—જે આચાર્ય ભેદ વિજ્ઞાનરૂપીશસ્ત્ર હાથમા લઇને બાહ્ય અને આભ્યતર સર્વ પરિગ્રહોને દૂર કરે છે, અને સગનો ત્યાગ કરે છે

અને છેવટે પોતાના આત્મામા લીન રહે છે એમની હુ સ્તુતિ કરૂ છુ આ ઉત્તમ આકિંચ ય નામે નવમો ધર્મ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો એકવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૦૫ ॥

ભાવાર્થ—ચોવીસ પ્રકારના પરિગ્રહો છે દશ બાહ્ય પરિગ્રહો અને ચૌદ અતરગ પરિગ્રહો આ સર્વે પરિગ્રહો અત્યત દુ ખકર છે પ્રથમ મુનિરાજ બાહ્ય પરિગ્રહોથી રહિત થઈ જાય છે પછી ધીમે ધીમે અતરગ પરિગ્રહો તજી દેવાનો યત્ન કરે છે અને જૈનધર્મના ઉત્તમ ભેદવિજ્ઞાનરૂપી શસ્ત્રને લઈને તે પરિગ્રહોનો વિનાશ કરી શકે છે જેથી તેઓ પોતાના આત્મામા લીન થઈ શકે છે શ્રાવકો પરિગ્રહોનો ત્યાગ ન કરી શકે તો તેમણે અવશ્ય પ્રમાણ રાખવુ જોઈએ અને તેથી પણ સ્વાત્મસુખ તરફ દૃષ્ટિ નાખી શકે છે જે મહામુનિરાજ પરિગ્રહોનો ત્યાગ કરે છે તેમને મારા નમસ્કાર છે આ સસારમા પરિગ્રહ તો વધારીએ તેટલો વધે અને ઘટાડીએ તેટલો ઘટે. માટે મનોભાવના પ્રબળ રાખી આત્મચિંતવન કરવુ જોઈએ ॥ ૧૦૫ ॥

सर्वाः स्त्रियः परित्यज्य मुक्तिस्त्रीसगमाय च ।
चिन्मये स्वात्मनि स्थातु यतते स्तौमि त सदा ॥१०६॥

અર્થ — જે આચાર્ય સર્વે પ્રકારની સ્ત્રીઓનો ત્યાગ કરી મુક્તિરૂપી સ્ત્રીને મેળવવા પ્રયત્ન કરે છે અને ચિદાનન્દમય પોતાના આત્મામા લીન રહેવા માટે સદા પ્રયત્ન કરે છે એવા આચાર્યની હુ સેવક સ્તુતિ કરૂ છુ આ બ્રહ્મચર્ય નામે દશમો ધર્મ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીનો બાવીસમો ગુણ છે

ભાવાર્થ —નવ પ્રકારની શીયળની વાડ સર્વે મનુષ્યો અને સ્ત્રીઓએ રાખવી જોઈએ. જે એ શીયળવ્રત પાળે છે તેઓ દીપી નીકળે છે તેમની કીર્તિના ચોમેર વખાણ થાય છે સીતા, અજના વિગેરે

સતીઓ શીલ રક્ષાને માટે મશહૂર છે પુરુષોએ પણ બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરવુ જોઇએ. જેઓ આ સસારની સ્ત્રીઓના સુખનો ત્યાગ કરીને સદા આત્મચિંતવન કરે છે તે વદનીય છે પૂજનીય છે એવા શ્રી મહામુનિગણ સર્વત્ર પ્રમાવશાળી વ્યક્તિતરીકે પૂજાય છે ખરેખર, સસારની વિચિત્ર માયા અને મોહનો જેઓ ત્યાગ કરી સદાને માટે ઉત્તમ બ્રહ્મચર્ય વ્રત પાળે છે તેવા શ્રી આચાર્ય દેવને મારું વદન છે ઉત્તમ બ્રહ્મચર્ય ગુણને ધારણ કરવાને માટે સર્વે જીવોએ મનોબળ કેળવીને ઉત્તમ વિચાર કરવા જોઇએ, અને બ્રહ્મચર્ય રાખવુ જોઇએ ॥ ૧૦૬ ॥

स्वर्मोक्षदायिनो हृद्या भवक्लेशविनाशिन. ।
मन्दबु या मया ह्येत दशधर्मास्तु वर्णिता ॥ १०७ ॥

અર્થ —એ ઉપર કહ્યા મુજબ દશ ઉત્તમ ધર્મો સ્વર્ગ અને મોક્ષનુ સુખ આપવાવાળા છે સર્વના હૃદયને આકર્ષિત કરવાવાળા છે, અને સસારના સમસ્ત ક્લેશોનો નાશ કરનારા છે, એવા એ દશ ધર્મનુ મેં મારી મદબુદ્ધિ પ્રમાણે વર્ણન કર્યુ છે ॥ ૧૦૭ ॥

છ આવશ્યકનુ વર્ણન

षण्णामावश्यकानां तु भववलेशविनाशिनाम् ।
व्या याधिनाशकानां च वर्णन क्रियतऽधुना ॥ १०८ ॥

અર્થ —સમતા વિગેરે છ આવશ્યકો સસારના બધા ક્લેશોનો નાશ કરવાવાળા છે અને આધિ, વ્યાધિ વિગેરે સમસ્ત રોગોનો નાશ કરવાવાળા છે એવા છ આવશ્યકોનુ વર્ણન હવે કરવામા આવે છે ॥ ૧૦૮ ॥

रागद्वेषौ परित्यज्य समं जानन् प्रियाप्रियौ ।
पदार्थौ यतते ध्यातुं स्वात्मानं प्रणमामि तम् ॥ १०९ ॥

અર્થ —જે આચાર્ય રાગ અને દ્વેષને સર્વથા છોડી દઈને પ્રિય અને અપ્રિય દરેક પદાર્થોને સરખા માની બધામા સમતાભાવ રાખે છે અને હમેશા પોતાના આત્માનુ ધ્યાન કરવા માટે પ્રયત્ન કરે છે એવા આચાર્યને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ સમતા નામે પ્રથમ આવશ્યક છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો તેવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૦૯ ॥

भक्त्यार्हतां सदा मध्य वन्दनां कुरुते यति ।
एकस्यैव स शुद्धात्मा वन्दनाप्रविधायकः ॥११०॥

અર્થ —જે આચાર્ય મુનિરાજ અરહત દેવોમાથી ગમે તે કોઈ એક અરહતદેવની ભક્તિપર્વક વદના કરે છે તે શુદ્ધ આત્માને ધારણ કરવાવાળા વદના નામ આવશ્યકને ધારણ કરનારા કહેવાય છે આ વદના નામે બીજુ આવશ્યક છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો ચોવીસમા ગુણ છે ॥ ૧૧૦ ॥

योऽर्हतां मोक्षदाना हि स्तुत्या मोक्षो भवेदिति ।
ज्ञात्वा कुर्वन् स्तवं नित्यं तृप्त स्वात्मनि नौमि तम् ॥१११॥

અર્થ —ભગવાન અરહતદેવ મોક્ષ આપવાવાળા છે એટલે એમની સ્તુતિ કરવાથી અવશ્ય મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે તેમ સમજીને જે આચાર્ય શ્રી અરહતદેવની હમેશા ભક્તિપૂર્વક સ્તુતિ કરે છે અને જે પોતાના શુદ્ધ આત્મામા હમેશા તૃપ્ત રહે છે, એવા આચાર્યદેવને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ પરમેષ્ઠીની સ્તુતિ કરવી તે સ્તુતિ નામે ત્રીજુ આવશ્યક છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીના પચ્ચીસમો ગુણ છે ॥૧૧૧॥

पक्षादिषु कृत दोष गुरवे यो निवेदयन् ।
प्रतिक्रमणमाकुर्वन् शुद्धस्तिष्ठति नौमि तम् ॥११२॥

અર્થ —જે આચાર્ય પખવાડીયુ, માસ અને વર્ષ નિર્ણય કરે ના અથવા પ્રમાદથી ઉત્પન્ન થયેલા દોષોને ગુરુની આગળ યથાસ્વરૂપમા જણાવે છે અને પ્રતિક્રમણ કરીને શુદ્ધ આત્મામા નિવાસ કરે છે એવા આચાર્ય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ પ્રતિક્રમણ નામનુ ચોથુ આવશ્યક છે અને આચાર્યનો ૮ વીસમો ગુણ છે ॥ ૧૧૨ ॥

अतीतेऽनागत काले कृतदोष त्यजन् ध्रुवम् ।
प्रत्याख्यान सदा कुर्वन् ज्ञान स्वात्मनि नौमि तम्॥११३॥

અથ —જે આચાર્ય ભૂતકાળ અથવા ભવિષ્યકાળમા કરેલા સમસ્ત દોષોને ત્યાગ કરે છે અને હમેશા પશ્ચાત્તાપ અથવા ત્યાગ કરીને પોતાના શુદ્ધ આત્મામા લીન રહે છે એવા શ્રી આચાર્યને હુ વદન કરુ છુ આ પ્રત્યાખ્યાન નામે પાચમુ આવશ્યક છે અને શ્રી આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો સત્તાવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૧૩ ॥

देहाद्भिन्नोऽस्मि चैतन्यरूपोऽस्मीति निज स्मरन् ।
व्युत्सर्गं धारयन्नित्य तृप्त स्वात्मनि नौमि तम् ॥ ११४ ॥

અથ —હુ આ શરીરથી જુદો છુ અને ચૈતન્યસ્વરૂપ છુ એ પ્રમાણે પોતાના આત્માનુ સ્વરૂપ ચિતવીને જે આચાર્ય હમેશા વ્યુત્સર્ગ ધારણ કરે છે અને પોતાના આત્મામા હંમેશા તૃપ્ત રહે છે એવા આચાર્યને હુ વદના કરુ છુ આ વ્યુત્સર્ગ નામે છઠ્ઠુ આવશ્યક છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીનો અઠ્ઠાવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૧૪ ॥

षट्विंशानां हि चैतेषां वर्णनं क्लेपनाशकम् ।
आवश्यक्गुणानां हि कामदं मोक्षदं कृतम् ॥ ११५ ॥

अर्थ—એ પ્રમાણે આચાર્ય પરમેષ્ઠીના જે ૭ આવશ્યક ગુણ છે તેનુ વર્ણન સર્વ ક્લેશોનો નાશ કરવાવાળુ છે બધી ઈચ્છાઓને પૂર્ણ કરવાવાળુ છે અને મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરવાવાળુ છે તેનુ વર્ણન ઉપર મુજબ મેં કર્યુ છે ॥ ૧૧૫ ॥

પંચાચાર વર્ણન

शान्तिसौख्यकरा नित्यं पंचाचारा सुखप्रदाः ।
वर्ण्यन्ते कामदा ह्यत्र भव्यतापविनाशकाः ॥ ११६ ॥

अर्थ—દર્શનાચાર વિગેરે પંચાચાર શાન્તિ અને સુખને આપવાવાળા છે સદા સુખી કરનાર છે વર્ણનીય છે, અને ભવ્ય જીવોના સમસ્ત સતાપને દૂર કરનારા છે એવા પાંચ આચારોનુ હવે વર્ણન કરવામા આવે છે ॥ ૧૧૬ ॥

पंचविंशतिदोषेभ्यो रहितं दर्शनं दधन् ।
तत्त्वश्रद्धां निजे कुर्वन् लीनं स्वात्मनि नौमि तम्॥११७

अर्थ—જે આચાર્ય પચ્ચીસ દોષોથી રહિત એવા સમ્યક્દર્શનને ધારણ કરે છે અને જે પોતાના આત્મામા જીવાદિ સાતે તત્ત્વોનુ શ્રદ્ધાન કરે છે અને પોતાના શુદ્ધ આત્મામા હમેશા લીન રહે છે એવા આચાર્ય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ દર્શનાચાર નામે પ્રથમ આચાર છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીના ઓગણત્રીસમો ગુણ છે ॥ ૧૧૭ ॥

तप नामे चोथो आचार छे, अने आचार्य परमेष्ठीना बत्रीसमो गुण छे ॥ १२० ॥

स्वात्मानं मोचयेदन्यात्स्वपदे स्थापयेद्ध्रुवम् ।
स्वराज्याय स्ववीर्येण यतते नौमि तं मुदा ॥ १२१ ॥

अर्थ —जे आचार्य पोताना वीर्याचारवडे अथवा आत्मबळनी द्वारा पोताना आत्माने समस्त पदार्थोथी अलग करी दे छे अने पोताना आत्माने पोताना आत्मजन्य स्वराज्यनी प्राप्तिने माटे पोताना शुद्ध आत्मामा लीन करी दे छे अर्थात् के हमेशा शुद्ध आत्मानी प्राप्ति माटे प्रयत्न करे छे एवा आचार्यने हु प्रसन्न थईने नमु छु आ वीर्याचार नामे पाचमो आचार छे अने श्री आचार्य परमेष्ठीना तेत्रीसमो गुण छे ॥ १२१ ॥

स्वर्मोक्षदायका पूता भवदु खनिवारका ।
पचधापि मयाचारा वर्णिता हितकारकाः ॥ १२२ ॥

अर्थ —आ पाचे आचार स्वर्ग अने मोक्षने आपवावाळा छे पवित्र छे ससारना दु खोना नाश करनारा छे अने बधानु हित करनारा छे एवा पाच आचारोना स्वरूपनु मे उपर मुजब वर्णन कर्यु छे ॥ १२२ ॥

त्रण गुप्तिओनु वर्णन.

वर्ण्यन्ते गुप्तय पूता भववह्निविनाशिका ।
स्वराज्यदायिका ह्या निजभावविबोधिका ॥१२३॥

अर्थ —हवे त्रण गुप्तिओनु वर्णन करवामा आवे छे आ त्रणे गुप्तिओ ससाररूप अग्निनो नाश करवावाळी छे आत्माना

શુદ્ધતારૂપ સ્વરૂ અને આપનારી છે હૃદયને મનોહર લાગે છે પવિત્ર છે અને પોતાના શુદ્ધ આત્માના સ્વરૂપને સમજાવનારી છે ॥૧૨૩॥

मोचयित्वाऽशुभाद्धित शुभ संस्थाप्य क्षापद ।
शुभादपि निजे लीन मनोगुप्तिधर स्तुवे ॥ १२४ ॥

અર્થ —જે આચાર્ય પોતાના હૃદયને અશુભ ધ્યાનથી દૂર કરી ઇચ્છાઓને શુદ્ધ કરવાવાળા શુભ ધ્યાનમા લગાડે છે અને ફરીથી શુભ ધ્યાનથી પણ સ્વહૃદયને દૂર કરીને પોતાના આત્મામા લીન કરે છે એવી મનોગુપ્તિને ધારણ કરવાવાળા આચાર્ય પરમેષ્ઠીની હુ સ્તુતિ કરૂ છુ આ મનોગુપ્તિ નામે પ્રથમ ગુપ્તિ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીના ચોત્રીસમો ગુણ છે ॥ ૧૨૪ ॥

शास्त्रनाश वचस्त्यक्त्वा मौन सदधत्ते यति ।
वचोगुप्तिधर नौमि स्वात्मध्यानपरायणम् ॥ १२५ ॥

અર્થ —જે આચાર્ય શાસ્ત્રની બહારના સમસ્ત વચનોનો ત્યાગ કરીને સદા મૌન ધારણ કરે છે અને પોતાના આત્મધ્યાનમા સદા લીન રહે છે એવા વચનગુપ્તિને ધારણ કરનારા આચાર્યને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ વચનગુપ્તિ બીજી ગુપ્તિ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ઠીના પાત્રીસમો ગુણ છે ॥ ૧૨૫ ॥

मोचयित्वा वपु पापात् कायगुप्तिं दधन्मुनि ।
स्वात्मकार्यरतो यो हि त नमामि स्वशुद्धये ॥१२६॥

અર્થ —જે આચાર્ય પોતાના શરીરને સમસ્ત પાપકર્મોથી દૂર કરી કાયગુપ્તિને ધારણ કરે છે અને જે પોતાના આત્માને શુદ્ધ કરવાના કાર્યમા લીન રહે છે એવા આચાર્ય પરમેષ્ઠીને હુ મારા—

આત્માની શુદ્ધિ અથ નમસ્કાર કરૂ છુ આ કાયગુપ્તિ ત્રીજી ગુપ્તિ છે અને આચાર્ય પરમેષ્ટીના છત્રીસમો ગુણ છે ॥ ૧૨૬ ॥

गुप्तयो वर्णिता पूता. जन्ममृत्युविनाशिका' ।
षट्खण्डराज्यदायिन्यो मोक्षसौख्यविधायिका. ॥१२७॥

અર્થ —ઉપર મુજબ મે યથાશક્તિ ત્રણે ગુપ્તિઓનુ વર્ણન કર્યુ છે એ ત્રણે ગુપ્તિઓ પવિત્ર છે જન્મમરણનો નાશ કરવાવાળી છે છ ખંડોના રાજ્યને આપવાવાળી છે અને મોક્ષસુખને પ્રદાન કરવાવાળા છે (માટે દરેકે ત્રણે ગુપ્ત નુ યથાશક્તિ પાલન કરવુ જોઈએ જે મહામુનિરાજ આ ગુપ્તિઓનુ યથાવિધિ પાલન કરે છે તેમને મારા ભક્તિપૂર્વક નમસ્કાર છે) ॥ ૧૨૭ ॥

एव हि वर्णिता ह्यत आचार्यपरमेष्ठिन ।
षट्त्रिंशद्धि गुणाः पूता ससारक्लेशनाशका ॥१२८॥

અર્થ —એ પ્રમાણે મે શ્રી આચાર્ય પરમેષ્ટીના પવિત્ર અને સસારના સમસ્ત કલેશોને નાશ કરનારા એવા છત્રીસ ગુણોને વર્ણન કર્યુ છે ॥ ૧૨૮ ॥

ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના ગુણ

उपा यायस्य वर्ण्यन्ते पूता. स्वर्मोक्षदा गुणा ।
पचविंशतिसख्याका वाछितार्थप्रदायिन. ॥ १२९ ॥

અર્થ —હવે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના પચ્ચીસ ગુણોને કહેવામા આવે છે એ પચ્ચીસ ગુણો પવિત્ર છે અને સ્વર્ગ મોક્ષને આપવાવાળા છે, અને ઇચ્છા અનુસાર ફળ પણ આપવાવાળા છે ॥ ૧૨૯ ॥

आचारांग पठोभित्य मुनिश्रावकगोचरम् ।
पाठयश्च परान् भव्यान् नौमि त स्वरसे रतम् ॥१३०॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠી મુનિ અને શ્રાવકની સમસ્ત ક્રિયાઓને કહેવાવાળા આચારાગ નામે પ્રથમ અગને નિત્ય ભણે છે અને ભવ્યજીવોને ભણાવે છે તથા જે સદા પોતાના આત્મરસમા લીન રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો આચારાગમા પારગત થવુ એ પ્રથમ મૂલગુણ છે

ભાવાર્થ—જૈનાગમમા કહ્યા મુજબ શ્રાવક અને મુનિરાજ ક્રિયાઓ પાળવા બધાઓના છે તે બધી શ્રાવકો અને મુનિરાજોને પાળવાની ક્રિયાઓનો આ આચારાગ નામે અગમા સમાવેશ થઈ જાય છે અને તેને ઉપાધ્યાયે પરમેષ્ઠી બરાબર જાણી લે છે અને પોતે ચારિત્રમા મૂકી તેનુ યથાસ્થિતિ પાલન કરે છે અને શ્રાવકોને ઉપદેશ આપી શ્રાવકોની ક્રિયાઓ પળાવવા પ્રયત્ન કરે છે એવા શ્રી ઉપાધ્યાયપરમેષ્ઠી વર્નીય છે ॥ ૧૩૦ ॥

पठन्सूत्रकृतांग या दीक्षाछेदादिबोधकम् ।
अन्यांश्च पाठयन् दक्ष स्वकार्ये नौमि त सदा ॥१३१॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠી દીક્ષા છેદ વિગેરેને પ્રગટ કરવાવાળા એવા સૂત્રકૃતાગ નામે બીજા અગને સ્વય ભણે છે અને બીજા ભવ્યજીવોને ભણાવે છે અને પોતાના આત્મકાર્યમા સદા તત્પર રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ સૂત્રકૃતાગ નામે બીજુ અગ છે અને તેમા પારગત થવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો બીજો ગુણ છે ॥ ૧૩૧ ॥

स्थानांग पाठयन्भव्यान् वस्तुभावादिबोधकम् ।
पठश्च स्वगृह गन्तु यतश्चे स्तौमि त मुदा ॥ १३२ ॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય વસ્તુસ્વભાવ અથવા પદાર્થોના સ્વભાવને મન્દ કરવાવાળા સ્થાનાંગ નામે અંગને સ્વય ભણે છે તથા અન્ય ભવ્યજીવોને ભણાવે છે તથા જે મોક્ષરૂપી પોતાના ગૃહમા જવા માટે સદા પ્રયત્ન કરતા રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને ઘણી નમ્રતા સાથે હુ નમસ્કાર કરુ આ સ્થાનાગ નામે ત્રીજુ અંગ છે અને તેમા પારગત થવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના ત્રીજો ગુણ છે ॥ १३२ ॥

पाठयन्समवायांग पठन् जीवादिबोधकम् ।
परान् स्थाने निजे स्थातु यतते यो हि नौमि तम् ॥१३३

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય જીવ અજીવ વિગેરે પદાર્થોના ઉત્પત્તિ સ્થાન વિગેરેને પ્રગટ કરવાવાળા સમવાયાગ નામે અંગને પોતે ભણે છે અને અન્ય જીવોને ભણાવે છે, અને જેઓ પોતાના મોક્ષરૂપી સ્થાનમા રહેવાને માટે હમેશા પ્રયત્ન કરે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ સમવાયાગ નામે ચોથુ અગ છે અને શ્રીઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો ચોથો ગુણ સમવાયાગમા પારગત થવાથી પ્રગટે છે ॥ १३३ ॥

व्याख्याप्रज्ञप्तिनामानं यः पठेत् पाठयेत् परान् ।
त स्तवीमि पदार्थस्य भेदाभेदादिसूचकम् ॥ १३४ ॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય સમસ્ત પદાર્થોના ભેદ અને પ્રભેદોને સૂચિત કરવાવાળા વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ નામે અગને સ્વય ભણે છે, અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીની હુ સ્તુતિ કરુ છુ આ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ નામે પાચમુ અગ છે અને તેમા પારગત થવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો પાચમો ગુણ છે ॥ १३४ ॥

અને બીજા મુનિયોને ભણાવે છે અને જે પોતાના આત્મામાં સં
લીન રહે છે, એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ અ
અ ત કૃત દશાંગ નામે આઠમુ અગ છે, અને તેમા પારગત થવુ (
ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના આઠમો ગુણ છે ॥ ૧૩૭ ॥

घोरोपसर्गजेतृणां मुनीनां वृत्तबोधकम् ।
अनुत्तरोपपादाग पठ्यते येन पाठ्यते ॥ १३८ ॥

અર્થ—જે મુનિ ઘોર ઉપસર્ગ જીતીને અનુત્તર વિમાનોમ
ઉત્પન્ન થાય છે એનુ વર્ણન અનુત્તરોપપાદ નામના નવમા અગમ
છે જે ઉપાધ્યાય આ નવમા અગને સ્વયં ભણે છે અને અન્ય મુનિ
યોને ભણાવે છે એમને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ અનુત્તરોપપાદાગ
નામે નવમુ અગ છે અને એને જાણવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો
નવમો ગુણ છે ॥ ૧૩૮ ॥

प्रश्नानां सुखदुःखादि सूचकं पाठयन् पठन् ।
प्रश्नव्याकरणांग यस्तस्थ स्वात्मनि नौमि तम् ॥१३९॥

અર્થ—જે ઉપાધ્યાય સુખ, દુખ, જીવન, મરણ, લાભ,
અલાભ આદિ પ્રશ્નોત્તરોને સૂચિત કરવાવાળા પ્રશ્ન વ્યાકરણ નામે
અગને સ્વય ભણે છે, અને બીજા મુનિયોને ભણાવે છે તથા જે
પોતાના શુદ્ધ આત્મામા લીન રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ
નમસ્કાર કરૂ છુ આ પ્રશ્ન વ્યાકરણાગ નામે દસમુ અગ છે, અને
તેનુ પઠન, પાઠન કરવુ તે શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો દસમો ગુણ
છે ॥ ૧૩૯ ॥

पठन् विपाकसूत्रांग द्रव्यभावादिकर्मणाम् ।
योतकं पाठयन् नित्य निजे तस्थोऽस्ति नौमि तम् ॥१४०

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય દ્રવ્યકર્મ, ભાવકર્મ અને તેના ઉદય ઉદીરણા આદિને પ્રકાશિત કરવાવાળા વિપાકસૂત્ર નામે અંગને સ્વય ભણે છે અને અન્ય મુનિઓને ભણાવે છે તથા જે પોતાના આત્મામા સદા તૃપ્ત રહે છે, એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને નમસ્કાર કરૂ છુ આ વિપાકસૂત્ર નામે અગીઆરમુ અંગ છે અને તેનુ પઠન પાઠન કરવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના અગીયારમો ગુણ છે ॥ ૧૪૦ ॥

एवमेकादशांगं यो स्वस्वभावादिबोधकम् ।
ध्याध्यादिनाशकं धत्ते सुखशान्तिप्रदायकम् ॥ १४१ ॥

અર્થ —જે અગીઆર અંગ પોતાના આત્માના સ્વભાવને પ્રતિબોધિત કરવાવાળા છે આધિવ્યાધિઓના નાશ કરવાવાળા છે, અને સુખ અને શાન્તિ આપવાવાળા છે શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠી એ સર્વ અગીઆર અંગોને ધારણ કરે છે સ્વય ભણે છે અને અન્યજીવોને ભણાવે છે (તેવા શ્રી ઉપાધ્યાયોને મારા વારંવાર પ્રણામ છે)॥ ૧૪૧

वर्ण्यन्तेऽथ सुभव्याना स्वधर्मादिप्रबोधका ।
चतुर्दश सुपूर्वा हि याथात्म्यसुखदायका ॥ १४२ ॥

અથ —હવે અહીંથી આગળ શ્રેષ્ઠ, ભવ્યજીવોને આત્મસ્વરૂપ બતાવવાવાળા અને યથાર્થ સુખ આપવાવાળા એવા ચૌદ પૂર્વનુ વર્ણન કહેવામા આવે છે ॥ ૧૪૨ ॥

पठन्नुत्पादपूर्वं यो ध्रौव्यात्ययादिसूचकम् ।
पाठयन् हि पराश्चित्य तृप्त स्वात्मनि नौमि तम् ॥१४३

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠી દ્રવ્ય વિગેરે પદાર્થોના ઉત્પાદ વ્યય ધ્રૌવ્ય વિગેરે સમસ્તધર્મોને પ્રગટ કરવાવાળા ઉત્પાદપૂર્વ નામના

પ્રથમ પૂર્વને સ્વય ભણે છે, અને બીજા મુનિયોને સદા ભણાવે છે તથા જે પોતાના આત્મામા સદા સતુષ્ટ રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમે ષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ ઉત્પાદપર્વ નામે પહેલો પૂર્વ છે અને તેનુ પઠન પાઠન કરવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના બારમો ગુણ છે ॥

सदा योऽग्रायणीपूर्वं प्रमाणनयवाचकम् ।
पठश्च पाठयन् वेत्ति स्वात्मानं नौमि तं मुदा ॥ १४४ ॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય નય અને પ્રમાણોનુ સ્વરૂપ બતાવવા વાળા અગ્રાયણી પૂર્વને સ્વય ભણે છે અને બીજા મુનિયોને ભણાવે છે તથા જે પોતાના આત્માના સ્વરૂપને સારી રીતે જાણે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ ઘણી પ્રસન્નતાથી નમસ્કાર કરુ છુ આ અગ્રાયણી પૂર્વ નામે બીજો પૂર્વ છે, તેનુ પઠન પાઠન કરવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો તેરમો ગુણ છે ॥ १४४ ॥

वीर्यानुवादपूर्वं यो तीर्थकृद्वीर्यसूचकम् ।
पठश्च पाठयश्चान्यान् नौमि तं स्वरसे रतम् ॥ १४५ ॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય તીર્થકરના બલ અને શક્તિને સૂચિત કરનાર વિર્યાનુવાદ પૂર્વને સ્વય ભણે છે, અને બીજા મુનિયોને ભણાવે છે અને પોતાના આત્મરસમા સદા લીન રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ વીર્યાનુવાદ નામે ત્રીજો પૂર્વ છે અને તેનુ પઠનપાઠન કરવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના ચૌદમો ગુણ છે ॥ १४५ ॥

योऽस्तिनास्तिप्रवादं हि जीवाजीवादिगोचरम् ।
पठश्च पाठयश्चान्यान् दक्षस्स्वात्मनि नौमि तम् ॥१४६॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય જીવ, અજીવ વિગેરે સમસ્ત પદાર્થોના અસ્તિત્વ, નાસ્તિત્વ વગેરે ધર્મોને સૂચિત કરવાવાળા અસ્તિનાસ્તિ

પ્રવાદ નામના પૂર્વને સ્વયં ભણે છે, અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે ને પોતાના આત્માનું સ્વરૂપ જાણવામા ચતુર છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરું છું આ અસ્તિનાસ્તિપ્રવાદ નામે ચોથો પૂર્વ છે અને તેનું પઠન પાઠન કરવું તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના ચઉદમો ગુણ છે ॥ ૧૪૬ ॥

पठन् ज्ञानप्रवादं हि ज्ञानाज्ञानादिबोधकम् ।
परान् हि पाठयन्नित्यं निजे तृप्तोऽस्ति नौमि तम् ॥१४७

અર્થ — જે ઉપાધ્યાય જ્ઞાન અથવા અજ્ઞાનના સ્વરૂપને બતાવવાવાળા જ્ઞાનપ્રવાદ નામે પૂર્વને સ્વયં ભણે છે અને બીજા મુનિયોને સદા ભણાવતા રહે છે, અને જે પોતાના આત્મામા તૃપ્ત રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરું છું આ જ્ઞાનપ્રવાદ નામે પાચમો પૂર્વ છે અને તેનું પઠન પાઠન કરવું તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના સોળમો ઉત્તમ ગુણ છે ॥ ૧૪૭ ॥

सत्यप्रवादं यो योगी दशधोक्त्यादिबोधकम् ।
पठश्च पाठयन् तुष्टः स्वरसे नौमि तं सदा ॥ १४८ ॥

અર્થ — જે ઉપાધ્યાય ઉક્તિ વિગેરે દશ પ્રકારના વચનોને બતાવવાવાળા સત્યપ્રવાદ પૂર્વને સ્વયં ભણે છે અને બીજા મુનિયોને ભણાવે છે, તથા જે પોતાના આત્મરસમાં સદા સંતુષ્ટ રહે છે એવા શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને મન હું નમસ્કાર કરું છું આ સત્યપ્રવાદ નામે છઠ્ઠો પૂર્વ છે અને શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીના સત્તરમો ગુણ છે શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠી તેનું ઉત્તમ રીતે પઠન પાઠન કરે છે ॥ ૧૪૮ ॥

श्रद्धयात्मप्रवादं हि मूर्तामूर्तादिबोधकम् ।
यः पठन् पाठयन् ध्यातुः स्तौमि तं गतले निजे ॥१४९

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય મૂર્તિ, અમૂર્તિ વિગેરે ધર્મોના સ્થાપન પ્રતિસ્થાપન કરવાવાળા આ પ્રવાદને સ્વયં ભણે છે અને અન્ય મુનિ ઓને ભણાવે છે, અને જે પોતાના આત્મામાં સ્થિર રહેવાનો સદા પ્રયત્ન કરે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરૂં છું આ આત્મપ્રવાદ નામે સાતમો પૂર્વ છે અને તેનુ પઠન પાઠન કરવું તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો અઢારમો ગુણ છે ॥ ૧૪૯ ॥

कर्मबंधोदयादीनां धारकं पाठयन् पठन् ।
कर्मप्रवादं सकलं स्वात्मन्यात्मनि नौमि तम् ॥१५०॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય કર્મોના બંધ અથવા કર્મોના ઉદય વિગેરેને બતાવવાવાળા સમસ્ત કર્મ પ્રવાદને સ્વયં ભણે છે અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે, અને જે પોતાના આત્માનુ સ્વરૂપ જાણવામાં ચતુર છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરૂં છું આ કર્મ પ્રવાદ નામે આઠમો પૂર્વ છે અને તેનુ પઠન પાઠન કરવું તે ઓગણીસમો ગુણ છે ॥ ૧૫૦ ॥

प्रत्याख्यानप्रवादं यो व्रतसंख्यानबोधकम् ।
पठन्त पाठयल्लीनं स्वपदे नौमि तं सदा ॥ १५१ ॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય વ્રતોની સંખ્યા અથવા વિધિ વિગેરેને પ્રગટ કરવાવાળા પ્રત્યાખ્યાનપ્રવાદને સ્વયં ભણે છે તથા અન્ય મુનિ યોને ભણાવે છે, અને જે પોતાના શુદ્ધ આત્મામાં સદા લીન રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીની હું સદા સ્તુતિ કરૂં છું આ પ્રત્યાખ્યાન પ્રવાદ નામે નવમો પૂર્વ છે અને તેનુ પઠન પાઠન કરવું તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો વીસમો ગુણ છે ॥ ૧૫૧ ॥

पठन् लघुमहाविद्याबोधकं पाठयन् परान् ।
नित्यं विद्यानुवादं यो स्वात्मानं वेत्ति नौमि तम् ॥१५२

અર્થ — જે ઉપાધ્યાય લઘુવિદ્યા અને મહાવિદ્યા બતાવવાવાળા વિદ્યાનુવાદ નામના પૂર્વને સ્વય ભણે છે અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે, અને જે આત્માના સ્વરૂપને બરાબર રીતે જાણે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ વિદ્યાનુવાદ નામે દસમો પૂર્વ છે અને તેનુ પઠન પાઠન કરવુ તે શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો એ વીસમો ગુણ છે ॥ ૧૫૨ ॥

योऽन्यान् कल्याणवाद वै अर्हद्गर्भादिबोधकम् ।
पठन् वा पाठयन् भावे शुद्धे लीनोऽस्ति नौमि तम् ॥१५३॥

અર્થ — જે ઉપાધ્યાય ભગવાન અરહત દેવના ગર્ભ, જન્મ, તપ, કેવલ અને મોક્ષ આ પાચે કલ્યાણકોનો બોધ કરાવનારા કલ્યાણ વાદને સ્વય ભણે છે, અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે જે પોતાના શુદ્ધ ભાવોમા સદા લીન રહે છે તેવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ કલ્યાણવાદ નામે અગીઆરમો પૂર્વ છે અને તેનુ પઠન પાઠન કરવુ તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો બાવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૫૩ ॥

प्राणावाय पठन् योऽन्यान् मन्त्रवादादिगोचरम् ।
पाठयन्छ्रभते नित्य स्वस्वाद नौमि त सदा ॥१५४॥

અર્થ — જે ઉપાધ્યાય મત્રવાદ વિગેરેનો બોધ આપનાર પ્રાણાવાય નામના પૂર્વને સ્વય ભણે છે અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે અને જે પોતાના આત્માના સ્વાદને સદા પ્રાપ્ત કરે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીની હુ સ્તુતિ કરુ છુ આ પ્રાણાવાય નામે બારમો પૂર્વ છે અને ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો તેનુ પઠન પાઠન કરવુ એ તેવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૫૪ ॥

पठन् क्रियाविशालं यः क्रियाछन्द प्रबोधकम् ।
पाठयश्च सदा ध्यानं हि निजे तुष्टोऽस्ति नौमि तम् ॥१५५॥

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય કલા છંદ વગેરે ક્રિયાઓને બતાવવાવાળા ક્રિયાવિશાલ નામે પૂર્વને સ્વયં ભણે છે અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે અને જે પોતાના આત્મામાં સંતુષ્ટ રહે છે એવા શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હું સદા નમસ્કાર કરું છું આ ક્રિયાવિશાલ નામે તેરમો પૂર્વ છે અને તેનું પઠન પાઠન કરવું તે ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો ચોવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૫૫ ॥

यो लोकबिन्दुसारं हि मोक्षसौख्यादिसूचकम् ।
पठन् वा पाठयन्नित्यं लीनं स्वात्मनि नौमि तम् ॥१५६

અર્થ —જે ઉપાધ્યાય મોક્ષસુખના સ્વરૂપને કહેવાવાળા લોકબિંદુસાર પૂર્વને સ્વયં ભણે છે અને અન્ય મુનિયોને ભણાવે છે, અને જે પોતાના આત્મામાં સદા લીન રહે છે એવા ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરું છું આ લોકબિંદુસાર નામે ચૌદમો પૂર્વ છે અને શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ઠીનો પચ્ચીસમો ઉત્તમ ગુણ છે ॥ ૧૫૬ ॥

चतुर्दशसुपूर्वाणि गदितानीति भक्तितः ।
यथा स्वर्गमोक्षमूलानि संसारध्वंसकानि हि ॥ २५७ ॥

અર્થ —એ પ્રમાણે મેં ભક્તિપૂર્વક ચૌદ પૂર્વોનું સ્વરૂપ કહ્યું આ ચૌદ પૂર્વો સ્વર્ગ મોક્ષને આપવાવાળા છે, અને જન્મ મરણ રૂપ સંસારનો નાશ કરવાવાળા છે ॥ ૧૫૭ ॥

एवं समुदिताः सर्वे पञ्चविंशतिसंख्यकाः ।
उपाध्यायगुरोरुक्ता ईदृशा दुःखहरा गुणाः ॥१५८॥

અર્થ —આ પ્રમાણે અગીયાર અંગ અને ચૌદ પૂર્વ મળીને એ શ્રી ઉપાધ્યાય પરમેષ્ટીના સર્વ પચ્ચીસ ગુણો બતાવ્યો છે આ સવ ગુણો મનોહર છે અને દુઃખોનો નાશ કરવાવાળા છે ॥ १५८ ॥

સાધુ પરમેષ્ટીના ગુણ

स्वर्मोक्षदा गुणा नूनमष्टाविंशतिसंख्यका ।
सार्वाद्धे ग्वहरा हृद्या वर्ण्यन्ते हि सुखप्रदा ॥१५९॥

અર્થ —હવે સાધુઓના અઠ્ઠાવીસ મુલગુણ બતાવવામા આવે છે એ સવ ગુણો મોક્ષસુખ આપનારા છે દુઃખોનો નાશ કરવાવાળા છે, અત્યંત મનોહર છે અને સર્વે જીવોને સુખ આપવાવાળા છે॥૧૫૯॥

त्रसस्थावरजीवान् यो जीवस्थानादिषु स्थितान् ।
ज्ञात्वा निजात्मवद्रक्षन् मग्न स्वात्मनि नौमि तम्॥१६०॥

અર્થ —જે સાધુ ચૌદ જીવસ્થાનોમા રહેવાવાળા સર્વે ત્રસ અને સ્થાવર જીવોની પોતાની આત્માસમાન જાણીને સદા રક્ષા કરે છે અને જે પોતાના આત્મામા સદા લીન રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ અહિંસા નામે પ્રથમ મહાવ્રત છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો પ્રથમ ગુણ છે

ભાવાર્થ —સર્વે પ્રમાણના જીવો અનંતાનંત છે તેમની ચાર પ્રકારે હિંસા થાય છે દુઃખ દેવું, ગીભાવવુ તે પણ હિંસા છે હિંસા મત લબ કે અનેક રીતે જીવો કરે છે પણ મહામુનિરાજ અહિંસા મહાવ્રતને પાળે છે, તેથી તેઓ પોતે પોતાના આત્મા જેવા જ અન્ય જીવોના આત્માને ગણી લે છે અને અન્ય જીવોની પણ રક્ષા કરે છે આમ અહિંસા મહાવ્રત પાળે છે અને મોક્ષસુખ મેળવવા પ્રયત્ન કરે છે ॥ १६० ॥

वचोऽप्रियानृतं त्यक्त्वा क्रूरवैरादिवर्द्धकम् ।
हितं मितं प्रियं सत्यं ब्रुवन् स्वं वेत्ति नौमि तम्॥१६१॥

અર્થ—જે સાધુ ક્લેશ, વૈર વિગેરેને વધારનારા અપ્રિય અને અસત્ય વચનોનો સર્વથા ત્યાગ કરે છે, અને સર્વનું હિત કરનારા પરિમિત, પ્રિય અને સત્ય વચનો હમેશા કહે છે, અને જે આત્મસ્વરૂપને સ્વયં સારી રીતે જાણે છે એવા સાધુ પરમેષ્ટીને હું નમસ્કાર કરું છું આ સત્યમહાવ્રત નામે બીજું મહાવ્રત છે અને સાધુ પરમેષ્ટીને બીજો ગુણ છે ॥ १६१ ॥

विस्मृतं पतितं द्रव्यं पुरग्रामवनादिषु ।
त्यक्त्वाऽदत्तं स्ववाह्यं यस्तृप्तः स्वात्मनि नौमि तम् ॥१६२॥

અર્થ—જે સાધુ કોઇ નગર, ગામ, વન વિગેરે કોઇપણ જગાએ કોઈની ભૂલથી પડી ગઈ હોય, ભૂલી ગયુ હોય, અથવા એવુ દ્રવ્ય હોય તેનો સર્વથા ત્યાગ કરી દે છે અને પોતાના આત્માથી જેટલા બાહ્ય પદાર્થ છે તેમને આપ્યા સિવાય ગ્રહણ ન કરે એટલે કે ચોરી પાપનો સર્વથા ત્યાગ કરી હમેશા પોતાના શુદ્ધ આત્મામા તૃપ્ત રહે છે એવા શ્રી સાધુપરમેષ્ટીને હું નમસ્કાર કરૂ છુ આ અચૌર્ય મહાવ્રત ત્રીજું મહાવ્રત છે અને સાધુ પરમેષ્ટીનો ત્રીજો ગુણ છે॥१६२॥

स्त्रीमात्रं मोक्षदं नोयैस्त्यक्त्वा सत्त्वं निजं स्मरन् ।
स्वात्मनैव सदा तुष्टो नौमि तं स्वात्मसाधकम् ॥१६३॥

અર્થ—જે સાધુ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવાને માટે સ્ત્રી માત્રનો ત્યાગ કરી દે છે પોતાના આત્મતત્વનું હમેશા સ્મરણ કરતા રહે છે પોતાના આત્માની શુદ્ધતાને જ હમેશા સિદ્ધ કરે છે, અને જે પોતાના આત્મામા

सदा सतुष्ट रहे छे એવા સાધુપરમેષ્ઠીને સદા હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ અપરિગ્રહ नामे ચોથુ મહાવ્રત છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો ચોથો ઉત્તમ ગુણ છે ॥ १६३ ॥

यस्त्यक्त्वाऽन्तर्बहि सग परवस्तुनि निर्मम ।
हृष्ट स्वात्मनि वद स निजात्मरसिक मुनिम् ॥ १६४ ॥

અર્થ —જે સાધુ પરપદાર્થોના મમત્વનો સર્વથા ત્યાગ કરીને અતરગ અને બહિરગ સર્વે પ્રકારના પરિગ્રહોનો સર્વથા ત્યાગ કરી દે છે, અને પોતાના આત્મામા સદા સતુષ્ટ રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ પરિગ્રહત્યાગ નામે પાચમુ મહાવ્રત છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો પાચમો ગુણ છે ॥ १६४ ॥

महाव्रतानां पचाना स्वरूप कथित मुने ।
दुःखहर्तु क्षमासिन्धोर्भवक्लेशविनाशिन ॥१६५॥

અર્થ —જે મુનિ સમસ્ત દુ ખોનુ હરણ કરનારા છે, દુ ખોનો નાશ કરનારા છે, ક્ષમાના સાગર છે, સસારના સમસ્ત ક્લેશોને દૂર કરનારા છે, એવા શ્રી મુનિરાજના પાચ ઉત્તમ મહાવ્રતોનુ સ્વરૂપ મે ઉપર મુજબ વર્ણવ્યુ છે ॥ १६५ ॥

वर्ण्यन्ते समिति पचभेदाः सुखकरा सदा ।
स्वर्मोक्षदायका॰ पापरोधका क्लेशनाशका ॥१६६॥

અર્થ —આગળ હવે સાધુઓની પાચ સમિતિઓનુ વર્ણન કરવાના આવે છે આ પાચે સમિતિઓ સુખ આપવાવાળી છે સ્વર્ગ મોક્ષ આપનારી છે પાપોના રોકવાવાળી છે, અને ક્લેશોને નાશ કરવાવાળી છે ॥ १६६ ॥

चतुर्हस्तप्रमाण या मार्ग पश्यन् दिन सदा ।
ईर्यासमित्या धर्मार्थं यत्नाद्गच्छति नौमि तम् ॥ १६७ ॥

અર્થ —જે સાધુ પરમેષ્ઠી ઈર્યાસમિતિથી દિવસે ચાર હાથ ભૂમિ આગળ જોતા જોતા ધર્મકાર્યને માટે ફક્ત પ્રયત્નપૂર્વક ગમન કરે છે એવા સાધુપરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરું છું. આ ચાર હાથ આગળ ભૂમિને જોતા જોતા શુદ્ધિ ભૂમિ ઉપર ગમન કરવું તે પ્રથમ ઈર્યા સમિતિ છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો છઠ્ઠો ગુણ છે ॥ ૧૬૭ ॥

परनिंदादियुक्तां या भाषां दशविधां त्यजन् ।
वाचं या हितदां मिष्टां वदन् स्वं वेत्ति नौमि तम् ॥१६८॥

અર્થ —જે સાધુ બીજાની નિંદારૂપ વચન અથવા કઠોર વચન આદિ દશ પ્રકારની નિંદા કરવા યોગ્ય ભાષાનો બોલવા માટે સર્વસ્વ ત્યાગ કરી દે છે અને પોતાના આત્મા તથા અન્ય જીવોને હિત કરવાવાળી તથા સર્વને પ્રિય લાગે તેવી મીઠી મધુરી ભાષા બોલે છે અને પોતાના આત્માના સ્વરૂપને સારી રીતે જાણે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરું છું આ ભાષા નામે બીજી સમિતિ છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો સાતમો ગુણ છે ॥ ૧૬૮ ॥

दोषान्तरायनिर्मुक्तं श्रावकैः शुद्धमर्पितम् ।
अन्नं क्षमन् सदा लीनो निजात्मनि नमामि तम्॥१६९॥

અર્થ — જે સાધુ છેતાલીસ દોષ અને બત્રીસ અંતરાય આદિથી રહિત, અને શ્રાવકોએ જેને આપેલ શુદ્ધ આહારને ગ્રહણ કરે છે અને પોતાના શુદ્ધ આત્મામાં સદા લીન રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરું છું આ એષણા સમિતિ નામે ત્રીજી સમિતિ છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો આઠમો ગુણ છે જે ગુણથી મુનિમહારાજ આત્મકો પાલણ કરે છે॥૧૬૯॥

ज्ञानसंयमपात्राणि यो गृह्णाति विसर्जति ।
प्रवर्तते सदा सम्यक् समित्या नौमि तं मुदा ॥१७०॥

અર્થ —જે સાધુ પરમેષ્ઠી જ્ઞાન અને સંયમના પાત્રોને (શાસ્ત્ર, પીંછી, કમંડલુ વિગેરે) સમિતિપૂર્વક એટલે કે જોઇ જાળવીને ગ્રહણ કરે છે જ્યાં ત્યાં બહુજ સાવધાળપૂર્વક મૂકે છે અને લે છે તથા પોતાની પ્રવૃત્તિ પણ સમિતિપૂર્વક હમેશાં રાખે છે, એવા સાધુપરમેષ્ઠીને હું પ્રસન્નચિત્તથી નમસ્કાર કરું છું આ આદાનનિક્ષેપણ નામે ચોથી સમિતિ છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો નવમો ગુણ છે ॥ ૧૭૦ ॥

स्थानेऽचित्ते विशाले हि मलमूत्रविसर्जनम् ।
कुर्वन् यो भवनाशं च स्वपदे नौमि तं स्थिरम् ॥१७१॥

અર્થ — જે સાધુ જીવજંતુરહિત વિશાલસ્થાનોમાં જોઇને અને બરાબર સંશોધન કરીને મલમૂત્ર કરે છે અને પોતાના જન્મ મરણ રૂપ સંસારનો નાશ કરે છે અને પોતાના શુદ્ધ આત્મામાં સદા સ્થિર રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હું નમસ્કાર કરું છું આ ઉત્સર્ગ સમિતિ નામે પાંચમી સમિતિ છે અને શ્રી સાધુપરમેષ્ઠીનો દશમો ગુણ છે જેથી વિનશ્વર અને કલ્યાણમૂર્તિ મુનિમહારાજ મોક્ષ લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરે છે ॥ ૧૭૧ ॥

स्वर्गमोक्षप्रदायक्यस्यैनि संसारक्षयकारिकाः ।
प्रोक्ताः समितयः पंच साधोः सर्वहितकराः ॥१७२॥

અર્થ —જે સાધુ પરમેષ્ઠી સ્વર્ગમોક્ષને આપવાવાળા છે એમની પાંચે સમિતિઓનુ ઉપરમુજબ વર્ણન કર્યું છે આ પાંચે સમિતિયો સંસારનો નાશ કરનારા છે અને સર્વ જીવોનું હિત કરનારી છે ॥૧૭૨॥

स्वात्मतत्त्वविदं साधो पापहर्तुः कृपानिधे ।
पंचेन्द्रियनिरोधा हि गुणा सवर्ण्यतेऽधुना ॥ १७३ ॥

અર્થ —જે સાધુ પોતાના આત્મતત્વને જાણવાવાળા અને પાપોનો નાશ કરનારા છે અને કૃપાના સાગર છે, એવા સાધુઓના પંચ ઇન્દ્રિયનિરોધ કરવાથી ઉત્પન્ન થયેલા ગુણોનું હવે વર્ણન કરવામ આવે છે જે પ્રમજ ચિત્તે હ્રદયમાં ઉતારે ॥ ૧૭૩ ॥

शीतोष्णकर्कशादिभ्यो वस्तुभ्यो यो न रुष्यति ।
शीताष्णादिवहिर्भूते स्थिरं स्वात्मनि नौमि तम् ॥१७४॥

અર્થ —જે સાધુ શીત, ઉષ્ણ, કઠોર વગેરે આ દિ ઉત્પન્ન કરવાવાળા પદાર્થોથી પણ કદી રૂષ્ટ થતા નથી અને શીત, ઉષ્ણ, કઠોર વગેરેથી સર્વથા ભિન્ન એવા પોતાના આત્મામાં સદા સ્થિર રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ટીને હું નમસ્કાર કરૂં છું આ સ્પર્શેન્દ્રિયનો નિરોધ કરવો તે પ્રથમ ઇન્દ્રિયનિરોધ છે, અને સાધુ પરમેષ્ટીનો અગીઆરમો ગુણ છે ॥ ૧૭૪ ॥

दधिदुग्धघृतादिभ्यो विरक्तः सत्सुखप्रदः ।
स्वरसे य स्थिरे तृप्त सदा त स्तौमि शमदं ॥ १७५ ॥

અર્થ — જે સાધુ જીહ્વા ઇન્દ્રિયના સુખ આપવાવાળા દહીં, દૂધ, ઘી, મિષ્ટાન્ન વિગેરે પદાર્થોથી સદા વિરક્ત રહે છે, અને સ્થિરભૂત પોતાના આત્મરસમા જ તૃપ્ત રહે છે તથા જે જીવોની સર્વ ઇચ્છાઓ પૂર્ણ કરવાવાળા છે એવા સાધુ પરમેષ્ટીની હું સદા સ્તુતિ કરૂં છું આ રસના ઇન્દ્રિયનો નિરોધ કરવો તે બીજો ઇન્દ્રિયનો નિરોધ છે, અને શ્રી સાધુ પરમેષ્ટીનો બારમો ગુણ છે ॥ ૧૭૫ ॥

શ્રોત્ર ઇંદ્રિયનો નિરોધ કરવો તે પાચમી ઇન્દ્રિયનો નિરોધ છે, અને શ્રી સાધુ પરમેષ્ઠીનો પદરમો ગુણ છે ॥ ૧૭૮ ॥

साधो स्वर्गापवर्गदातुर्द मुक्तिभर्त्तु क्षमानिधे ।
अक्षरोधगुणा पच प्रोक्ता मदधिया मया ॥१७९॥

અર્થ —જે સાધુ સ્વર્ગ અને મોક્ષ આપવાવાળા છે મુક્તિરૂપી સ્ત્રીના સ્વામી છે અને જે ક્ષમાના સાગર છે, એવા સાધુ મહારાજના પાચ ઇંદ્રિયોના નિરોધ કરવારૂપ પાચ ગુણોનુ મદબુદ્ધિવાળા મેં તેનુ યથાશક્તિ વર્ણન કર્યું છે ॥ ૧૭૯ ॥

क्लेशहर्तुर्दयामूर्त शांतिदातु क्षमानिधे ।
षडावश्यका हि वर्ण्यन्ते गुणा साधो दुखहरा ॥१८०॥

અર્થ —જે સાધુ સમસ્ત ક્લેશોને દૂર કરનાર છે જે યાની મૂર્તિ છે અને સમસ્ત જીવોને શાન્તિ આપવાવાળા છે, અને જે ક્ષમાની નિધિ છે એવા સાધુના સમસ્ત જીવોનુ હિત કરનારા છ આવશ્યકોનુ હવે પછી વર્ણન કરવામા આવે છે ॥ ૧૮૦ ॥

आत्मबाह्ये पदार्थे या नित्येऽनित्ये प्रियेऽप्रिये ।
साम्य दृष्वा स्थिता ह्यासीचिदानद हि नौमि तम् ॥१८१॥

અર્થ —જે સાધુ પોતાના આત્માથી ભિન્ન નિત્ય, અનિત્ય, પ્રિય, અપ્રિય વિગેરે સમસ્ત પદાર્થોમા સમતા રાખીને ચિદાનદમય પોતાના આત્મામા સદા સ્થિત રહે છે એવા સાધુને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ સમતા નામે પહેલુ આવશ્યક છે અને સાધુ પરમેષ્ઠીનો સોળમો ગુણ છે ॥ ૧૮૧ ॥

अर्हत्सिद्धादिपूज्यानां त्रिकाले भक्तिवदनाम् ।
कुर्वन् यो निजराज्येऽभूत् स्थिरस्त नौमि मोक्षदम् ॥१८२॥

અર્થ —જે સાધુ ભગવાન અર્હત દેવ અથવા સિદ્ધ પરમેષ્ઠી વિગેરે પૂજ્ય પુરુષોની પ્રાતઃકાલ, મધ્યાન્હકાલ, અને સાયકાલ ત્રણે વખત ભક્તિ અને વંદના કરતા કરતા પોતાના આત્મસ્વરૂપ શાન્ત્યમા સદા સ્થિર રહે છે અને ભવ્યજીવોને મોક્ષ આપવાવાળા છે એવા સાધુ પરમેષ્ટીને હું નમસ્કાર કરૂં છુ આ વંદના નામે બીજું આવશ્યક છે, અને સાધુ પરમેષ્ટીનો સત્તરમો ગુણ છે ॥ ૧૮૨ ॥

वृषभादिजिनानां यः कुर्वन् गुणस्तवादिकम् ।
मनोवाक्कायशुध्द्या य स्तौमि त तृप्तमात्मनि ॥ १८३ ॥

અર્થ —જે સાધુ પોતાના મન, વચન, અને કાયાની શુદ્ધતાથી ભગવાન વૃષભદેવ વિગેરે તીર્થંકરોના ગુણોની સ્તુતિ કરતા કરતા પોતાના આત્મામાં સદા તૃપ્ત રહે છે એવા સાધુઓની હું સ્તુતિ કરૂં છું આ સ્તુતિ નામે ત્રીજું આવશ્યક છે, અને સાધુ પરમેષ્ટીનો અઢારમો ગુણ છે ॥ ૧૮૩ ॥

द्रव्यक्षेत्रादिभावेषु कृतदोषादिवर्जनम् ।
य प्रतिक्रमणं कुर्वन् स्वे वसेत्‌ स्तौमि तं मुदा ॥१८४॥

અર્થ —જે સાધુ પરમેષ્ટી દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભાવ વિગેરે વડે થયેલા અથવા કરેલા દોષોનો સર્વથા ત્યાગ કરીને પ્રતિક્રમણને ધારણ કરે છે અને પોતાના આત્મસ્વરૂપને સારી રીતે જાણે છે એવા સાધુઓની હું પ્રસન્નતા સાથે સ્તુતિ કરૂં છું આ પ્રતિક્રમણ નામે ચોથું આવશ્યક છે અને સાધુ પરમેષ્ટીનો ઓગણીસમો ગુણ છે ॥ ૧૮૪ ॥

सावद्यद्रव्यभावानां प्रत्याख्यानं विधाय यः।
निरवद्येषु भावेषु वर्तते नौमि तं स्थिरम् ॥ १८५ ॥

અર્થ —જે સાધુ પાપસહિત દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, ભાવ વિગેરે ભાવોનો સર્વથા ત્યાગ કરીને એટલે પ્રત્યાખ્યાન કરીને નિર્દોષ અથવા પાપરહિત દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ભાવોમાં સ્થિર રહેવા માટે સદા પ્રયત્ન કરે છે અને પોતાના આત્મામાં સ્થિર રહે છે, એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ પ્રત્યાખ્યાન નામે પાચમુ આવશ્યક છે અને શ્રી સાધુ પરમેષ્ઠીનો વીસમો ગુણ છે ॥ ૧૮૫ ॥

आत्मा चिन्मयमात्रोऽस्ति मम ज्ञात्वेति चिद्धृत ।
तन्वादौ निर्मम मन्यो लीन स्वात्मनि नौमि तम् ॥१८६॥

અર્થ —જે સાધુ પરમેષ્ઠી પોતાના આત્મના ચિન્તોથીજ પોતાના આત્માને ચૈતન્યમાત્ર સમજીને પોતાના શરીરથી મમત્વનો સર્વથા ત્યાગ કરી દે છે અને પોતાના આત્મમા સદા લીન રહે છે એવા સાધુપરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ વ્યુત્સર્ગ નામે છઠ્ઠુ આવશ્યક છે અને શ્રી સાધુપરમેષ્ઠીનો એકવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૮૬ ॥

ससारनाशकस्येति स्वर्गमोक्षप्रदायिन ।
क्षमासिंधोर्मुने प्रोक्ता ये षडावश्यका गुणा ॥१८७॥

અર્થ —જે સાધુ જન્મમરણરૂપ સસારનો નાશ કરવાવાળા છે, સ્વર્ગ મોક્ષને આપવાવાળા છે અને ક્ષમાના સાગર છે એવા સાધુના જે છ આવશ્યક ગુણો છે તેનુ મેં ઉપરમુજબ વર્ણન કરેલુ છે॥૧૮૭॥

क्रोधादयोऽथ वर्ण्यन्ते गुणा सप्त महामुने ।
क्षमासिंधोर्हि भव्यानामज्ञानांधविनाशिन ॥१८८॥

અર્થ —જે સાધુ ક્ષમાના સાગર છે જે ભવ્યજીવોના અજ્ઞાન અધકારને દૂર કરવાવાળા છે એવા મહામુનિ સાધુ પરમેષ્ઠીના કેશલોચ વિગેરે સાતે ગુણોનુ વર્ણન કરવામા આવે છે ॥ ૧૮૮ ॥

लाच द्विचतुर्मासैः कुर्वन्नुपवसेन्मुनि ।
विरक्त सन् हि तन्वादौ लीनः स्वात्मनि नौमि तम्॥१८९

અર્થ —જે સાધુ મુનિ પોતાના શરીરથી સદા વિરક્ત થઈ બે મહીને, ત્રણ મહીને અથવા ચાર મહીને પોતાના વાળનો કેશલોચ કરે છે અને તે દિવસ નકી ઉપવાસ કરે ક અને જે પોતાના આત્મામા લીન રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ કેશલોચ સાધુ પરમેષ્ઠીના બાવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૮૮ ॥

बाह्यवस्त्रादिभिर्मुक्त जिनलिंग सुनिर्मलम् ।
स्वर्गोक्षसाधक धृत्वा निजे यो नौमि त स्थिर' ॥ १९० ॥

અથ —જિનલિંગ અથવા નગ્ન અવસ્થા બાહ્ય વસ્ત્રાદિથી રહિત છે અત્યત નિર્મલ છે અને સ્વર્ગ અને મોક્ષસિદ્ધ કરવાવાળી છે એવી કઠિન નગ્નાવસ્થાને ધારણ કરી જે સાધુ સ । પોતાના આત્મામા સ્થિર રહે છે એવા સાધુઓને હુ નમસ્કાર મરૂ છુ આ જિનલિંગ અથવા નગ્ન અવસ્થા ધારણ કરવી તે સાધુ પરમેષ્ઠીના તેવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૯૦ ॥

ममात्मा ज्ञानवैराग्यजलनैव हि शुध्यति ।
ज्ञात्वा त्यक्त्वा जलस्नान ज्ञाने यो नौमि त स्थिरम् ॥१९१

અર્થ —આમારો આત્મા જ્ઞાન અને વૈરાગ્યરૂપી જલથીજ શુદ્ધ થઈ કરે છે, બીજા કાઈથી નહિ એમ સમજી સાધુ જલસ્નાનનો હમેશા ત્યાગ કરી દે છે અને પોતાના આત્મજ્ઞાનમા સદા લીન રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ સ્નાન ત્યાગ નામે સાધુનો ચોવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૯૧ ॥

तणकटकभूम्यादी शयन कुरुते हि य ।
कर्म जतु विरक्त सन् जाग्रथात्मनि नौमि तम् ॥१९२॥

અર્થ —જે સાધુ કર્મોને જીતવાને માટે શરીરથી વિરક્ત થઈ સુકુ ઘાસ અગર માટા વિગેરે થી ભરપુર એવી ખરબચડી જમીન ઉપર જ હમેશા શયન કરે છે અને પોતાના આત્મામા સદા જાગ્રત રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ ભૂમિપર સૂઈ જવુ તે સાધુ પરમેષ્ઠીના પચ્ચીસમો ગુણ છે ॥ ૧૯૨ ॥

दन्तादिघर्षण त्यक्त्वा करांगुल्या हि निस्पृहः ।
स्वात्मानुभवसम्पन्नस्तसो यो नौमि त निजे ॥ १९३ ॥

અથ —જે સાધુ પોતાના શરીરથી સર્વથા નિસ્પૃહ થઈ હાથની આગળીઓથી પણ કદી દાતોને ઘસતા નથી સ। પોતાના આત્માના અનુભવથી સુશોભિત રહે છે પોતાના આત્મામા સ। તૃપ્ત રહે છે એવા શ્રીસાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરુ છુ આ દત ધાવનનો ત્યાગ તે શ્રીસાધુપરમેષ્ઠીનો છવ્વીસમો ગુણ છે ॥ ૧૯૩ ॥

शुद्ध स्थानत्रिके कुर्वन् ध्यानार्थे स्थितिभाजनम् ।
स्थित्वा हस्तपुटैर्यो हि लीनः स्वात्मनि नौमि तम् ॥१९४॥

અર્થ —જે સાધુ પોતાનુ ધ્યાન ધારણ કરી શકે તેટલાજ માટે બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય અને વૈશ્ય એ ત્રણે શુદ્ધ વર્ણોમાજ ઉભા ઉભા કરપાત્ર માજ આહાર ગ્રહણ કરે છે અને પોતાના શુદ્ધ આત્મામા સદા લીન રહે છે એવા સાધુ પરમેષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ સ્થિતિભોજન અથવા ઉભાઉભા ભોજન આહાર તરીકે લેવુ તે સાધુ પરમેષ્ઠીનો સત્તાવીસમો ઉત્તમ ગુણ છે ॥ ૧૯૪ ॥

कुर्वन् पर्याप्तकाले च पक्ष्मुक्ति विरागवान् ।
सम्यग्ज्ञानादिवृद्ध्यर्थं तम स्वात्मनि नौमि तम् ॥ १९५ ॥

અર્થ —અમાગગીર અને ભોગોથી તત્ક્ષણ વિરક્ત થવાને પ્રયત્ન કરતા સાધુ પોતાના સમ્યગ્જ્ઞાન વિગેરે ગુણોની વૃદ્ધિને માટે શાસ્ત્રોના કહેલા વખતે દિવસમા એક વખતજ આહાર લે છે અને પોતાના શુદ્ધ આત્મામા સદા લીન રહે છે એવા સાધુ પરમે ષ્ઠીને હુ નમસ્કાર કરૂ છુ આ દિવસમા એકવાર ભોજન કરવુ તે સાધુનો અઠવીસમો ગુણ છે ॥ ૧૯૫ ॥

साधोर्मूलगुणा प्रोक्ता अष्टाविंशतिसंख्यका ।
स्वर्मोक्षहेतवा द्यते कषायादिनाशका ॥ १०६ ॥

અર્થ —એ પ્રમાણે યે સાધુ પરમે ષ્ઠીના અઠવીસ મૂલગુણોનુ વર્ણન કર્યુ છે એ સર્વે મૂલગુણો સ્વર્ગ અને મોક્ષનુ કારણ છે અને ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ કષાયોને નાશ કરવાવાળા છે ॥૧૯૫॥

—०—

अथ प्रशस्ति. ।

प्रसिद्धे मूलसंघेऽस्मिन् शुद्धे सेनान्वये वरे ।
गच्छ पुष्करगे जातो जिनसेनो महाकविः ॥ १ ॥
देवेंद्रकीर्ति संजातस्तस्य शिष्यान्वये शुभे ।
धर्मस्य नेता तच्छिष्य सूरि श्रीशांतिसागर' ॥ २ ॥

અર્થ —આ પ્રસિદ્ધ મૂલસંઘમા સેનગણ અને પુષ્કર ગચ્છમા પ્રસિદ્ધ આચાર્ય જિનસેન મહાકવિ થઈ ગયા એ આચાર્ય જિનસેનની શિષ્યપરંપરામા મુનિરાજ દેવેન્દ્રકીર્તિ થઈ ગયા. અને તે દેવેંદ્રકીર્તિના શિષ્ય ધર્મના મુખ્ય નેતા એજ શ્રી આચાર્ય શાંતિસાગરજી છે

आसीदय महासूरिर्भोजग्रामनिवासिन ।
भीमगौडस्य सत्याया सुपुत्रः सातगौडक ॥ ३ ॥
मुनिदीक्षां समादाय प्राप्त सूरिपद क्रमात् ।
मम दीक्षागुरु सोऽय जीयादाचद्रतारकम् ॥ ४ ॥

અર્થ —આ આચાર્ય શાંતિસાગરજી મહારાજ ભોજ (બેલગાવ) ગામના રહેવાસી પાટીલ ભીમગૌડના સુપુત્ર છે એમનુ નામ સાતગૌડ હતુ અને એમની માતાનુ નામ સત્યવતી હતુ એ સાતગૌડ મુનિદીક્ષા ગ્રહણ કરી અનુક્રમે આચાર્યપદ પ્રાપ્ત કર્યું છે એજ આચાર્ય શ્રી શાંતિસાગરજી મારા દીક્ષાગુરુ શ્રી છે અને એ મારા દીક્ષાગુરુ શ્રી આચાર્ય શાંતિસાગરજી મહારાજ આ પૃથ્વી ઉપર જ્યા સુધી સૂર્ય, ચ દ્ર, નક્ષત્રગણ, તારા વગેરે રહે ત્યા સુધી સદાકાલ જયવન્ત રહો ॥ ૩ ૪ ॥

मुमुक्षुस्तस्य शिष्योऽहं मुनि श्रीकुन्थुसागरः ।
अन्ये च बहवः शिष्याः सञ्जातास्तस्य योगिनः ॥५॥

અર્થ —મોક્ષની ઈચ્છા રાખવાવાળો હું મુનિ કુંથુસાગરજી એમનીજ આચાર્ય શ્રીશાંતિસાગરજીનો શિષ્ય છું એ આચાર્યને મારા સિવાય બીજા ઘણા શિષ્યો છે ॥ ૫ ॥

श्रीवीरसागरो विद्वान् गुणज्ञो नेमिसागरौ ।
श्रीचन्द्रसागरो योगी दयानुं पायसागरः ॥ ६ ॥
नमिसागरयोगीशो मुमुक्षुरादिसागरः ।
स्मार्तो वक्ता तपस्वी च मुनि सुधर्मसागरः ॥ ७ ॥

અર્થ —વિદ્વાન વીરસાગર અને ગુણોને જાણવાવાળા બંને નેમિસાગર, યોગિરાજ ચંદ્રસાગર, દયાનિધિ પાયસાગર, યોગિરાજ નમિસાગર, મોક્ષની ઇચ્છાવાળા આદિસાગર અને સ્મૃતિ શાસ્ત્રના પરમવક્તા અને તપસ્વી મુનિરાજ સુધર્મસાગર વિગેરે ઘણા તેમના શિષ્યો છે । ૬ ૭ ॥

मध्यभारतदेशस्थचावलीग्रामवासिनः ।
तोतारामस्य मेवाया धर्मपत्न्यां वरनन्दनः ॥ ८ ॥
विद्वाञ्छ्रदनलालोऽपि मुनिर्भूत्वा सुधर्मधीः ।
सुधर्मसागरो जातः सूरिकल्पः प्रपाठकः ॥ ९ ॥
सुधर्मध्यानदीपादिग्रन्थानां मूलकारकः ।
सुधर्मसागरः सोऽयं जीयाद्विद्यागुरुर्मम ॥ १० ॥

અર્થ —મધ્યભારતવિષે ચાવલી ગામના રહેવાસી તોતારામ

અને તેમના શ્રમપત્ની મેવાદેવીથી ઉત્પન્ન થએલા એક નમાત્મા સુપુત્ર હતા. તેમનુ નામ નદનલાલ હતુ તે નદનલાલ વિદ્વાન હતા. અને સદ્બુદ્ધિને ધારણ કરવાવાળા હતા. એજ નદનલાલ મુનિદીક્ષા લઈને સુધર્મ સાગરના નામથી પ્રસિદ્ધ થયા છે જેઓ આચાર્યશ્રી મારફે બધાને ભણાવનારા છ અને મારા વિદ્યાગુરુ છે એવા સુધર્મસાગર મુનિ સદા જયવિત રહો ॥ ૯ ૧૦ ॥

एनापुरस्थसातप्पासरस्वत्यो सुतोत्तम ।
रामचन्द्र मुदीक्षित्वा जातोऽह कुंथुसागर ॥ ११ ॥

અર્થ —એનાપુર (એનગાવ) ના રહેવાસી સાતપ્પા અને સરસ્વતીદેવીના ઉત્તમ પુત્ર રામચન્દ્ર મુનિદીક્ષા લઈને હુ મુનિ કુંથુ સાગર થયો છુ ॥ ૧૧ ॥

उदगीरपुरे श्रेष्ठी गगासानामकोऽभवत् ।
तद्भार्या रुक्मिणी ज्ञेया रामचद्र• सुतस्तयो• ॥ १२ ॥
सूरेराज्ञां समादाय मयैव कुंथुसिंधुना ।
दीक्षित• सोऽपि भव्यात्मा विद्वान् सुमतिसागर• ॥१३॥

અર્થ —ઉદગીર નગરમા એક ગગાસા નામે શેઠ રહે છે તેમની સ્ત્રીનુ નામ રુક્મિણી છે તેમને રામચન્દ્ર નામે એક પુત્ર હતા મે કુંથુસાગર મુનિએ આચાર્ય શાંતિસાગરજીની આજ્ઞા લઈને એ ભવ્ય અને વિદ્વાન રામચન્દ્રને મુનિદીક્ષા આપી છે અને એમનુ નામ સુમતિસાગરજી રાખવામા આવ્યુ છે ॥ ૧૨ ૧૩ ॥

चतुर्विंशतितीर्थेशस्तुति पचगुरुस्तुति ।
चरित्र शांतिसिंधोश्च भावना रचिता मया ॥ १४ ॥

અર્થ —મે અત્યારસુધીમા ચોવીસ તીર્થંકર સ્તુતિ, પચપરમેષ્ટી સ્તુતિ, આચાર્ય શાંતિસાગરજીનુ ચરિત્ર, અને નિજાત્મશુદ્ધિભાવના વિગેરે ગ્રંથોની રચના કરેલી છે ॥ ૧૪ ॥

दीक्षागुरोरेव च शातिसिंधो: ससारहर्तु शिवसौख्यदातु: ।
कृपाप्रसादाद्धि सुधर्मनाम्नो, विद्यागुरोरेव दयार्द्रमूर्ते: ॥१५॥
श्रीकुथुनाम्ना मुनिना स्वबुध्या, स्वजन्ममृत्योश्च विनाशहेतो: ।
यथा परेषा सुखशातिहेतोर्यथार्थधर्मस्य च बोधहेता ॥ १६ ॥
नाम्ना हि बोधामृतसार एव, ग्रथस्तृतीयो रचितश्च भक्त्या।
अज्ञानहर्ता निजबोधकर्ता, भेत्ता ध्रुव क्रोधचतुष्टयस्य ॥ १७ ॥

અર્થ —જન્મમરણરૂપી સસારનો નાશ કરવાવાળા, અને મોક્ષ સુખ આપવાવાળા આચાર્યશ્રી શાંતિસાગરજી મહારાજ મહારા દીક્ષા ગુરુ છે અને દયાનીમૂર્તિ એવા મુનિરાજ સુધર્મસાગરજી મારા વિદ્યા ગુરુ છે એ બંને ગુરુઓની કૃપાના પ્રસાદથી મેં મુનિરાજ કુથુસાગરજીએ પોતાના જન્મમરણનો નાશ કરવા માટે બીજા જીવોને સુખ, શાંતિ પ્રાપ્ત કરી શકવા માટ, યથાર્થ ધર્મના (જિનધર્મના) જ્ઞાનનો પ્રચાર કરવાને માટે 'બોધામૃતસાર' નામે ત્રીજો ગ્રથ મારી બુદ્ધિ અનુસાર બનાવ્યો છે આ ગ્રથ પણ અત્યત મનોજ્ઞ છે અજ્ઞાનનો નાશ કરનાર છે, અને આત્મજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરવાવાળો છે તથા ચાર કષાયો ક્રોધ, માન, માયા, અને લોભનો નાશ કરવાવાળો આ ગ્રથ છે એવા એ ઉત્તમ જ્ઞાનથી ભરપુર ગ્રથની રચના મેં ભક્તિપૂર્વક કરી છે ॥ ૧૫ - ૧૬ - ૧૭ ॥

छन्दोऽलकारशास्त्र वा न च काव्यस्थलादिक ।
नैव नीत्यादिशास्त्र च न्यायव्याकरणादिकम् ॥ १८ ॥

विशेष धर्मशास्त्रं वा नैव जानामि सत्वतः ।
तथापि केवलं भक्त्या लिखितोऽयं मयाऽधुना ॥ १९ ॥

અર્થ —જો કે હું છંદશાસ્ત્ર, અલંકારશાસ્ત્ર, કાવ્યશાસ્ત્ર, કથા વિગેરેની જાણનો નથી નથી નીતિશાસ્ત્રને જાણતો, કે નથી ન્યાય વ્યાકરણને હું જાણતો તથા ધર્મશાસ્ત્રને પણ સારીરીતે જાણતો નથી તો પણ કેવળ ભક્તિવશ થઈને મેં આ વખતે આ શાસ્ત્ર લખ્યું છે ॥ ૧૮-૧૯ ॥

न कृतं ख्यातिपूजार्थं नाहंकारितया मया ।
केवलं भव्यजीवानां कुमदु.खप्रशान्तये ॥ २० ॥
शाश्वतस्य सुखस्यार्थं स्वादार्थं स्वसुखस्य वा ।
स्वर्मोक्षदायकं ह्यस्तुल्यं स्वपरबोधकम् ॥ २१ ॥
वाञ्छितार्थप्रदं पूतं रोगशोकार्तिनाशकम् ।
परमेष्ठिनां गुणानां वा पचानां परिवर्णनम् ॥ २२ ॥
मनोवाक्कायसंशुध्द्या भक्तिभावबलेन हि ।
विहितं सर्वशान्त्यर्थं मङ्गलार्थं च सर्वदा ॥ २३ ॥

અર્થ —આ મોક્ષમાર્ગપ્રદીપ । પાચ પરમેષ્ઠીઓના ગુણોનું વર્ણન મેં પોતાની પ્રસિદ્ધિ-ખ્યાતિને માટે કર્યું નથી, પોતાનું મોટાપણું બતાવવા માટે કર્યું નથી, પોતાનું અભિમાન બતાવવા માટે કર્યું નથી પરંતુ ફક્ત ભવ્યજીવોના કર્મ અને દુ:ખોને શાંત કરવાને માટે વર્ણન કર્યું છે અથવા હંમેશા નિત્યરૂપે રહેવાવાળા મોક્ષસુખની પ્રાપ્તિ માટે, અથવા પોતાના આત્મજન્ય આનંદરસની પ્રાપ્તિ માટે, અથવા સમસ્ત જીવોની શાંતિ માટે અથવા સર્વદા મંગળ રહેવા માટે પોતાની ભક્તિ

ભવ્યપુરુષ ઉમંગથી મનોહર લાગતા સંસારના ઇંદ્ર ચક્રવાલ વગેરેના સાગભત સુખોનો અનુભવ કરતા, જન્મ મરણ અને ઘડપણ થી ભરેલા આ સંસારના દુખોનો નાશ કરે છે અને અનુક્રમે સ્વર્ગ અને પછી મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે ॥ ૨૪ ૨૫ ૨૬ - ૨૭ ॥

मुद्विपञ्चाधिके पूते चतुर्विंशतिक शत ।
वर्षे वीरप्रभोर्मोक्ष उपष्ट स्वर्मोक्षदायिन ॥ २८ ॥
पक्षऽसितत्रयोदश्या सुदरे सामवासर ।
हिम्मतसिंहनरेशस्य न्यायनीतिदयायुज. ॥ २९ ॥
श्रेष्ठरत्नधनाकीर्णे हिम्मते नगरे वर ।
ध्वजादिभूषिते स्थित्वा श्रीचन्द्रप्रभुमन्दिरे ॥ २० ॥
मोक्षमार्गप्रदीपाऽय ग्रन्थ स्वमोक्षसाग्प्रद ।
लिखितो भव्यबोधार्थं भवाम्र' शांतिदतव ॥ ३१ ॥
स्वानदस्वादतृप्तेन दिगम्बरमुद्रिलिगिना ।
शांतिसागरशिष्येण कुन्थुसागरयोगिना ॥ ३२ ॥
कृता जयपुरे भाषा नान्नुलालेन शास्त्रिणा ।
दृष्टा च मगलकरी भाद्रमासे गुरौ दिन ॥ ३३ ॥
शुक्लपक्षस्य पचम्यां चतुर्नवतिमयुते ।
एकोनविंशतिशत शके श्रीविक्रमस्य वै ॥ ३४ ॥

चिंतामण कल्पतरो. समान सुखप्रद वांछितद यथेष्टम् ।
ग्रंथ ह्यघ ध्वांतहर स्वमूलात्सुबोधद मोक्षपदप्रद वै ॥ ३५ ॥
स्मरति गायति पठति भक्त्या त एव भव्याश्च नरामरत्वम् ।
कन्या लभन्ते सुखद सुधर्म क्रमात्तया शाश्वतक स्वराज्यम्॥

शिववरसुखदात्री वीरवाणी सदैव ।
मम शुभमतिदाता शांतिसिंधु सुधर्म. ॥ ३९ ॥

અર્થ—પરમદેવ ભગવાન શાંતિનાથ જીનરાજ સદા જયવંત રહો. દેવ, મનુષ્ય અને મુનિયોની દ્વારા પૂજ્ય શ્રીવર્ધમાન ભગવાન્ સદા જયવંત રહો. એ જન્મમાં મોક્ષસુખને આપવાવાળી ભગવાનું મહાવીર સ્વામીની વાણી સદા જયવંત રહો અને આચાર્ય શાંતિસાગર તથા સુધર્મસાગર કે જે મને શુદ્ધ બુદ્ધિ આપવાવાળા છે તે સદા જયવંત રહો ॥ ૩૮ ૩૯ ॥

॥ समाप्तोऽयं ग्रंथः ॥

—o—

श्री आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमालाके स्थायिसदस्य

१ श्री दि जैन मंदिर जेहर
२ श्री दि जैन मंदिर नरसीपुर
३ शा हेमचंद पीतांबरदास नरसीपुर
४ श उगरचंद अमपाल्लाल ,,
५ शा दलीचन्दलाल नानचन्दजी जेहर
६ दामोदरदास बेचरदास ,,
७ शा शिवलाल हरगोविंदलाल नरसीपुर
८ वकी शिवलाल फतेचंद जेहर
९ ब्र प्यारेबाई जी दामरा
१० शा पुरुषोत्तमदास मगनलाल जेहर
११ शा भीखालाल रायचंद ,,
१२ शा फतचंद दोलचंद
१३ शा मोतीलाल केवलदास ,,
१४ वकी अमरचंद देवचंद
१५ वकी हरचंद गोरधनदास ,
१६ शा नेमचंद नानकचंद नरसीपुर
१७ शा अमचंद त्रिभुवनदास ,
१८ शा कानजीलाल हरजुभाई ,,
१९ शा हरीलाल शांतिदास जेहर
२० शा दिवशाल रुदुभाई ,,
२१ शेठ ठाकरचंद मगनचंदलाल गेडिया
२२ शा छोटालाल पीतांबरदास नरसीपुर
२३ शा हरीलाल मगनलाल जेहर
२४ श्री दि जैनमंदिर दाथोल
२५ शा चिमनलाल मादलाल मेहलाव
२६ शा केवलदास रावजीभाई ईडर
२७ शा हीरालाल फतेचंद सावली
२८ शा कालीदास नानचंद ईडर
२९ सेठ अबीरचंद रूलमीचंद कटनी
३० सेठ भोरजी शंभुरामजी मंदसौर
३१ शा भवानलाल पीताम्बरदास नरसीपुर
३२ शा मणीलाल जेसिंगभाई अहमदाबाद
३३ शा फुलचंद ताराभाई पादरा
३४ चिमनलाल शिवलाल कलोल
३५ चुनीलाल नरोत्तमदास नरसीपुर
३६ रेवचंद रवचंद रणियाल
३७ गांधी उगरचंद फुलचंद ,,
३८ शा रवचंद रेमचंद ,,
३९ छगनलाल जेठाभाई पाथीना
४० सि तोडरमल कन्हैयालाल कटनी